भाकृअनुप
ICAR

ICARDA
Science for Better Livelihoods in Dry Areas

प्रशिक्षण कार्यक्रम

शुष्क क्षेत्र में आजीविका सुरक्षा हेतु कृषि आधारित लघु उद्यमिता विकास

(7-9 दिसम्बर, 2016)

संकलन
अनुराग सक्सेना
विनय नांगिया
सोमा श्रीवास्तव
रंजय कुमार सिंह
प्रदीप कुमार
सुशील कुमार शर्मा

आयोजक
भा. कृ. अनु. प.- केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान
जोधपुर- 342003 (राजस्थान)

शुष्क क्षेत्र में आजीविका सुरक्षा हेतु कृषि आधारित लघु उद्यमिता विकास

7-9 दिसम्बर, 2016

संकलन एवं संपादन

अनुराग सक्सेना
विनय नांगिया
सोमा श्रीवास्तव
रंजय कुमार सिंह
प्रदीप कुमार
सुशील कुमार शर्मा

भा. कृ. अनु. प.- केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान
जोधपुर- 342003 (राजस्थान)

विषयसूची

क्र. सं.	व्याख्यान का विषय	विषय विशेषज्ञ	पृष्ठ संख्या
1.	शुष्क क्षेत्र में संरक्षित कृषि की उपयोगिता एवं संभावनायेँ	डा. अनुराग सक्सेना	1-4
2.	अधिक आय हेतु उन्नत सब्जी पौध उत्पादन एवं पौधशाला प्रबंधन	डा. प्रदीप कुमार	5-9
3.	शुष्क क्षेत्र में बागवानी विकास की तकनीकियाँ	डा. अकथ सिंह	10-18
4.	बागवानी फसलों में कुशल जल प्रबंधन	डा. आर के सिंह	19-23
5.	काजरी द्वारा विकसित चारा उत्पादन संबंधी तकनीकियाँ	डा. एम पाटीदार	24-26
6.	डेयरी प्रबंधन एवं दुग्ध उत्पाद निर्माण	डा. बी के माथुर	27-31
7.	मशरूम उत्पादन कैसे करें	श्रीमती सविता सिंघल	32-36
8.	केचुआ खाद एवं अज़ोला उत्पादन तकनिकी	डा. एस के शर्मा	37-41
9.	महिलाओं द्वारा आय उपार्जन हेतु लाभप्रद तकनीकियाँ	डा. सोमा श्रीवास्तव	42-46
10.	तुड़ाई उपरांत प्रबंधन एवं मूल्य संवर्धित उत्पाद विकास (सिद्धान्त एवं प्रयोगात्मक प्रदर्शन)	डा. सोमा श्रीवास्तव	47-51
11.	उद्यमिता विकास हेतु उपयोगी सौर उपकरण	डा. सुरेन्द्र पूनीया	52-56

शुष्क क्षेत्र में संरक्षित कृषि की उपयोगिता एवं संभावनाएं

अनुराग सक्सेना, रंजय कुमार सिंह एवं प्रदीप कुमार
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

संरक्षित खेती वर्तमान संदर्भ में कृषि की सबसे आशाजनक क्षेत्रों में से एक है। यह मुख्य रूप से भोजन, पोषण और आर्थिक सुरक्षा के लिए बागवानी और सजावटी फसलों के स्थानीय और निर्यात दोनों मांग के लिए उच्च तकनीक और गहन प्रथाओं को शामिल आगामी एक और वैकल्पिक उत्पादन प्रणाली है। पॉलीहाउस ऐसे ढांचे (प्लास्टिक के हरित गृह) हैं जो परम्परागत काँच–घरों के स्थान पर बेमौसमी फसलोत्पादन के लिए उपयोग में लाए जा रहे हैं। इसमें खेत को चारो तरफ से एक विशेष प्रकार की पारदर्शी मोटी पॉलीथीन से ढक दिया जाता है, ताकि सब्जियों और फूलों की खेती के लिए वैसा ही वाताणरण मिल सके, जैसा कि इनके लिए जरूरी होता है। ये ढाँचे बाह्य वातावरण के प्रतिकूल होने के बावजूद भीतर उगाये गये पौधों का संरक्षण करते हैं और बेमौसमी नर्सरी तथा फसलोत्पादन में सहायक होते हैं। साथ ही पॉलीहाउस में उत्पादित फसल अच्छी गुणवत्ता वाली होती है। यह प्रति इकाई क्षेत्र उपज कई गुना बढ़ा सकते हैं। फसलों को भी असमय या ऑफ सीजन में वर्ष भर उगाया जा सकता है। पॉलीहाउस उत्पादन प्रौद्योगिकी को पहले ही देश के कई हिस्सों में अपनाया जा चुका है।

संरक्षित खेती से प्रति इकाई क्षेत्र सालाना आमदनी खुले खेत में खेती की तुलना में 10–100 गुना हो सकता है। संरक्षित खेती पानी और भूमि के कम उपयोग को सुनिश्चित करती है और यह जलवायु परिवर्तन के मौजूदा परिदृश्य के तहत अत्यंत महत्वपूर्ण होती जा रहा है। संरक्षित खेती के अंतर्गत सब्जियों, फलों और फूलों को वर्ष भर, शहरी और परिनगरिया क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। यह खेती पद्धति आवश्यकताओं के अनुरूप ताजा उपज मांग को पूरा करने, बेरोजगार युवकों के लिए, पर्यावरण के लिए, सीमांत किसानों के लिए काफी उपयुक्त है।

मानव जाति के लिए प्रकृति का उपहार हमेशा के लिए असीमित और मुक्त नहीं है। दिनो–दिन आबादी बढ़ती जा रही है और आधुनिकीकरण के कारण बुनियादी ढांचे के लिए काम बढ़ता जा रहा है और कृषि भूमि कम से कमतर होती जा रही है और इसका मूल्य भी बढ़ रहा है। इसके अलावा विश्व जल संसाधन तेजी से कम हो रहे हैं। अतः सिमटते उपयोग हेतु भूमि और पानी की वजह से संरक्षित खेती एक वैकल्पिक रूप में भविष्य में उपयोगी है। वैसे संरक्षित खेती के अंतर्गत कई सारी संरचनाएँ आती हैं, जिनमें पॉलीहाउस अति महत्वपूर्ण है।

पॉलीहाउस के लाभ

1. सब्जी घरेलू खपत और निर्यात के लिए अधिक उत्पादन
2. बिना मौसम नर्सरी की स्थापना
3. खुले मैदान की तुलना में ग्रीनहाउसों में सब्जियों की उत्पादकता कई गुना है
4. सब्जी बीज एवं संकरबीज उत्पादन

पॉलीहाउस की संरचना

ढाँचे की बनावट के आधार पर पॉलीहाउस कई प्रकार के होते हैं। जैसे गुम्बदाकार, गुफानुमा, रूपान्तरित गुफानुमा, झोपड़ीनुमा, आदि। पहाड़ों पर रूपान्तरित गुफानुमा या झोपड़ीनुमा डिजायन अधिक उपयोगी होते हैं। ढाँचे के लिए आमतौर पर जीआई पाइप या एंगिल आयरन का प्रयोग करते हैं जो मजबूत एवं टिकाऊ होते हैं। अस्थाई तौर पर बाँस के ढाँचे पर भी पॉलीहाउस निर्मित किए जा सकते हैं जो सस्ते पड़ते हैं। आवरण के लिए 600–800 गेज (150–200 माइक्रोन) की मोटी पराबैगनी प्रकाश प्रतिरोधी प्लास्टिक शीट का प्रयोग किया जाता है। इनका आकार आवश्यकतानुसार रखा जा सकता है।

निर्माण लागत तथा वातावरण पर नियन्त्रण की सुविधा के आधार पर पॉलीहाउस तीन प्रकार के होते हैं।

1. लो कास्ट पॉलीहाउस या साधारण पॉलीहाउस– इसमें यन्त्रों द्वारा वातावरण पर किसी प्रकार का कृत्रिम नियन्त्रण नहीं किया जाता।
2. मीडियम कास्ट पॉलीहाउस– इसमें वातावरण (ठण्डा या गर्म करने के लिए) साधारण उपकरणों का ही प्रयोग करते हैं।
3. हाई कास्ट पॉलीहाउस– इसमें आवश्यकता के अनुसार तापक्रम, आर्द्रता, प्रकाश, वायु संचार आदि को घटा–बढ़ा सकते हैं और मनचाही फसल किसी भी मौसम में ले सकते हैं।

फसल उत्पादन और उपज की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए निम्न संरचनाओं का उपयोग किया जाता है

1. नेट हाउस– इनको सब्जियों, जड़ी–बूटियों को उगाने के लिया कीट, पकछि, अधिक धूप, ओला और बारिश के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने के लिए उपयोग किया जाता है
2. प्लास्टिक टनेल– ये सब्जियां और फूलों के शुरुआती नर्सरी के लिए इस्तेमाल हो रहे हैं
3. ग्रीनहाउस– इनमें फसलों को नियंत्रित वातावरण में उगाया जाता है
4. वाकइन टनेल– यह लकड़ी, प्लास्टिक, लोहे के बने छोटे अर्द्ध गोलाकार संरचना फ्रेम है जो सबसे लोकप्रिय प्रकार का ग्रीनहाउस है

सब्जियों का चुनाव

पॉलीहाउस में बेमौसमी उत्पादन के लिए वही सब्जियाँ उपयुक्त होती हैं जिनकी बाजार में माँग अधिक हो और वे अच्छी कीमत पर बिक सकें। जाड़े में भिंडी, खीरा मटर, पछेती फूलगोभी, पातगोभी, फ्रेंचबीन, शिमला मिर्च, टमाटर, मिर्च, मूली, पालक आदि फसलें तथा ग्रीष्म व बरसात में भिण्डी, बैंगन, मिर्च, पातगोभी एवं लौकी वर्गीय सब्जियाँ ली जा सकती हैं। फसलों का चुनाव क्षेत्र की मांग के आधार पर कुछ भिन्न हो सकता है। अगेती फूलगोभी, टमाटर, मिर्च आदि की पौध भी पॉलीहाउस में डाली जा सकती है। इसी प्रकार ग्रीष्म में शीघ्र फलन लेने के लिए लौकीवर्गीय सब्जियों टमाटर, बैंगन, मिर्च, शिमला मिर्च की पौध भी जनवरी में पॉलीहाउस में तैयार की जा सकती है।

सस्य क्रियाएँ एंव देखभाल

पॉलीहाउस के भीतर उगाई जाने वाली सब्जियों में वे सभी सस्य क्रियाएँ करनी पड़ती हैं जिन्हें खुले खेत में अपनाते हैं। गोबर की खाद का भरपूर उपयोग करना चाहिए। बीच–बीच में मिट्टी का निर्जमीकरण आवश्यक होता है, जिसके लिए फार्मेलडिहाइड तथा अन्य रसायन या प्लास्टिक शीट बिछाकर सौर ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है। प्रति इकाई क्षेत्र में पौधों की संख्या बढ़ाकर पौधों की उचित छटाई व ट्रेनिंग द्वारा बेलदार फसलों से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। साधारण पॉलीहाउस में दिन में उचित वायु संचार का प्रबन्ध अत्यावश्यक है।

उपज तथा आय की सम्भावनाएँ

काजरी में किये गये परीक्षणों में खीरा की बुवाई करके प्रतिवर्ग मीटर क्षेत्र से 12 –15 किलोग्राम की पैदावार मिली है। नवम्बर के प्रारम्भ में लगाये गये टमाटर से 15–20 किलोग्राम की पैदावार मिली है। 100 वर्गमीटर का एंगिल आयरन का साधारण पॉलीहाउस बनाने में लगभग 30,000 रुपए का खर्च आता है। विवेकपूर्ण फसलों के उत्पादन से प्रथम दो वर्ष के भीतर ही लागत वसूल हो सकती है। उसके बाद के वर्षों में केवल उत्पादन लागत तथा 4 वर्षों में प्लास्टिक शीट बदलने का खर्चा शेष रहने से काफी मुनाफा कमाने की सम्भावना रहती है।

पॉलीहाउस के अन्दर फसल उगाना काफी लाभप्रद पाया जाता है तथा इससे कृषक अधिक लाभ अर्जित कर सकते हैं। पाली हाउस में विभिन्न सब्जियाँ जैसे– टमाटर, शिमला मिर्च, खीरा, खरबूजा, फलीदार सब्जी, फूल व पत्ता गोभी, मिर्च, लौकी आदि सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं।

टमाटर को पॉलीहाउस के अंदर भूमि में 15 से.मी. उठे बेड में लगाना चाहिए। बेड की चौड़ाई 3 फिट और लंबाई आवश्यकतानुसार रखते हैं। पौधो की रोपाई उठी हुई बेड में दोहरी पंक्तियों में करनी चाहिए और सिंचाई हेतु ड्रिप लाइन बछानी चाहिए जिसपर 30 से.मी. के अंतराल पर ड्रिप्पर लगे हों।

टमाटर की फसल के लिए 35 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर तथा 150:100:80 किलोग्राम एनपीके खेत की तैयारी के समय डालें। रासायनिक उर्वरकों को पूरे फसल चक्र में तीन भाग बनाकर डालें। उपरोक्त मिश्रण का लगभग 15 ग्राम प्रति पौधे के हिसाब से रोपाई के पहले प्रत्येक कूड़ में दें। रोपाई के 20 दिन बाद 20 ग्राम प्रति पौधा व 50–50 दिन बाद पुनः 10 ग्राम प्रति पौधा देकर फसल की अच्छी तरह से गुड़ाई करनी चाहिए।

बुवाई एवं रोपण की दूरी

टमाटर

(अ) 60 x 50 से.मी. (डण्डों के सहारे पौधों को साधना शाखाओं की कटाई न करने पर)

(ब) 50 x 30 से.मी. (प्रत्येक पौधे के केवल मुख्य तनों को रस्सी के सहारे साधने पर)

शिमला मिर्च

50 x 50 से.मी (दोहरी पंक्तियों में)

खीरा

50 x 30 से.मी. (दोहरी पंक्तियों में)

खाद एवं उर्वरक

प्रत्येक वर्ष प्रतिवर्ग मीटर 3 किलोग्राम गोबर की सड़ी खाद मिट्टी में मिलाएँ। इसके अतिरिक्त उपरोक्त फसलों में 12–15 ग्राम नत्रजन, 6–9 ग्राम फास्फोरस तथा 6–9 ग्राम पोटाश प्रतिवर्ग मीटर क्षेत्र में दें।

पौधों की काँट–छांट व सहारा देना

टमाटर की अल्प परिमित तथा अपरिमित किस्मों के सघन रोपण में केवल मुख्य तने को पतली रस्सी या डोरी के सहारे बढ़ने दिया जाता है। बगल से निकलने वाली अन्य शाखाओं को समय–समय पर हटाते रहना चाहिए।

तापक्रम पर नियन्त्रण

साधारण पॉलीहाउस में ठण्डी में रात में खिड़की दरवाजे बंद रखे जाते हैं जबकि गर्मियों में तापक्रम न बढ़ने देने के लिए इन्हें दिन रात खुला रखने की आवश्यकता पड़ती है।
लोन–केंद्र सरकार, राज्य सरकारें और अन्य प्राइवेट कंपनियां भी ग्रीनहाउस की खेती में रूचि रखने वाले किसानों को ना केवल तकनीकी बल्कि आर्थिक मदद भी कर रहे हैं। कई सरकारी एंजेंसियां और विभाग ग्रीन हाउस बनाने के लिए कम ब्याज दरों पर लोन देते हैं। सरकार की ओर से किसानों को अनुदान देय है। लघु व सीमांत किसानों को लागत की 75 प्रतिशत राशि अनुदान के रूप में जबकि अन्य को 50 प्रतिशत से ग्रीनहाउस स्थापित कर सकते हैं।

ग्रीन हाउस बनान के लिए क्या क्या चाहिए होता है–

खेती की जमीन यदि स्थानीय बाजार के नजदीक हो तो लागत काफी कम हो जाती है।

जैसे– ग्रीन हाउस का ढांचा बनाना तथा इसको बनाने में इस्तेमाल होने वाले छोटी–बड़ी मसीनें, सिंचाई में काम आने वाला सामान, फर्टिलाइजर से जुड़ा सामान, ग्रेडिंग और पैकिंग के लिए जगह,

रेफ्रिजरेटर वैन की जरूरत, ऑफिस में लगने वाले इलैक्ट्रॉनिक सामान, ग्रीन हाउस में इस्तेमाल होने वाली न्यू टेक्नोलॉजी वाली मशीनें, मजदूर, कीटनाशकों, उर्वरकों और प्रेजरवेटिव्स पर होने वाली लागत आदि)।

लागत–ग्रीन हाउस बनाने में दो तरह की लागत आती है। पहली शुरू में लाग्ने वाली स्थायी लागत और दूसरी साल दर साल होने वाली लागत।

स्थाई लागत: स्थाई लागत का मतलब है ऐसी लागत जो एक बार होने है। जैसे कि खेती की जमीन खरीदना या फिर ग्रीन हाउस का ढांचा तैयार करना। एक हेक्टेयर में ग्रीन हाउस को बनाने की लागत लगभग 30–40 लाख आता है।

हर साल बार बार होने वाली लागत: इसका मतलब है ऐसी लागत जो हर साल हर सीजन में बार बार होती है। जैसे कि बुआई की लागत या भी मजदूरों पर होने वाला खर्च इत्यादि।

अधिक आय हेतु उन्नतसब्जीपौध उत्पादन एवं पौधशाला प्रबंधन

प्रदीप कुमार एवं प्रतापसिंह खापटे
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान)

बीज की भाँति पौध रोपण द्वारा उगाई की जाने वाली सब्जी फसलों की उन्नत तरीके से तैयार पौध भी अच्छे उत्पादन का आधार है। खासकर सब्जी फसलों के उत्पादन में उत्तम गुणवत्ता वाली पौध का होना भी आवश्यक होता है। सब्जी फसलें जिनकी पौध पहले पौधशाला में तैयार की जाती है और बाद में तैयार पौध की रोपाई मुख्य खेत में की जाती है उनमें टमाटर, मिर्च, बैगन, फूल गोभी, पत्ता गोभी व गांठ गोभी, ब्रोकोली, सलाद, प्याज, आदि प्रमुख हैं। इनके अलावा आमतौर पर सीधे खेत में बीज से बुआई की जाने वाली कद्दूवर्गीय कुल की सब्जियों (जैसे–खीरा, खरबूजा, तरबूज, लौकी, तोरी आदि) की गर्मियों की अगेती फसल लेने हेतु या फिर ग्रीनहाउस में (मुख्यतः खीरा) उत्पादन हेतु इनकी पौध पहले पॉलिथीन की थैलियों में या फिर प्लास्टिक की 'प्रो–ट्रे' या 'सीडलिंग–ट्रे' में तैयार की जाती है।

साधारणतया आम किसान परंपरागत तरीके से बीज–शैया में ही पौंध तैयार करते हैं क्योंकि गुणवत्तापूर्ण व सफल नर्सरी–पौध तैयार करने में तकनीकी कुशलता के साथ–साथ कुछ आवश्यक सामाग्री व संरचना की आवश्यकता पड़ती है। जिसके कारण अपेक्षाकृत कम बीज जमाव तथा पौधशाला में लगाने वाले रोग के अलावा इस दौरान विषाणु रोग के आक्रमण के कारण उन्हें काफी नुकसान उठाना पड़ता है। इन कारणों के अलावा, स्वस्थ पौध की सब्जी उत्पादन में महत्ता तथा संकर किस्म के बीजों के दाम अधिक होने के कारण उन्नत तरीके से उत्पादित स्वस्थ नर्सरी–पौध की माँग का बाजार वर्तमान में उभरता दिखाई दे रहा है। अतः खासकर सीमांत किसान व खेती से संबंध रखने वाले नवयुवक उपयुक्त प्रशिक्षण प्राप्त कर, अपेक्षाकृत कम लागत में सब्जी–पौध उत्पादन को स्थानीय क्षेत्र में व्यवसाय के रूप में अपनाकर अपनी जीविका का आधार बना सकते हैं।

उन्नत सब्जी–पौध उत्पादन संबंधी विस्तृत विवरण इस अध्याय में दिया गया हैं।

1- मिट्टी आधारित बीज–शैया पर पौध उत्पादन

कम लागत में व्यवसाय हेतु भूमि या मिट्टी में उन्नत पौध तैयार करने के लिए बीजशैया/पौधशाला के स्थान चुनाव से लेकर उपयुक्त मिट्टी, खाद, उर्वरक, आवश्यक यंत्र, उन्नत प्रजाति के बीज, सिंचाई के उचित साधन, बीज बुआई, बीमारी व कीड़ों से बचाव के लिए उचित प्रबन्धन व पौधो को ढकने के लीये विभिन्न प्रकार की जाली इत्यादि की आवश्यकता पड़ती है जिनका विवरण इस प्रकार है।

उचित माध्यम

सब्जियों की स्वस्थ पौध तैयार करने के लिए बीजशैया में उचित बढ़वार का माध्यम का होना आवश्यक है ताकि नवविकसित पौधो की जड़े भूमि में अच्छी तरह पकड़े रहें व उचित विकास के लिए आवश्यक पोषण प्राप्त कर सकें। एक आदर्श बीज के जमाव और पौधों की बढ़वार के लिए उचित माध्यम के मुख्य लक्षण इस प्रकार हैं। मिट्टी का पीएच मान लगभग उदासीन (पीएच 6.5 – 7.5) हो। उसमें उचित जलधारण करने व वायुसंचार अच्छा हो। खरपतवार, हानिकारक रोग, कीटाणुओं, सूत्रकृर्मी, इत्यादि से मुक्त हो। माध्यम हेतु प्रयुक्त सामाग्री स्थानीय स्तर पर सस्ते दरों पर उपलब्ध हो। भौतिक व रासायनिक संचरना अच्छी हो ताकि वे पौधों को सुगमतापूर्वक स्थिर रख सकें।

कार्बनिक खाद

पौध उगाने के लिए कार्बनिक खाद जैसे कम्पोस्ट खाद, गोबर की सड़ी खाद व केंचुए की खाद उपयुक्त होती हैं। इनमें पौधो के लिए आवश्यक लगभग सभी तत्व पाये जाते हैं तथा पौधो के उचित विकास में सहायक होते हैं। इनके प्रयोग से मृदा के भौतिक संरचना सुधरती है और जलधारण करने की क्षमता बढ़ती है। यह ध्यान रखना चाहिए कि ये सभी खादें अच्छी प्रकार से सड़ी हुई हों अन्यथा उनमें दीमक लगने की सम्भावना रहती है। पौधशाला मे प्रयोग की जा रही खाद को महीन करके जाली की सहायता से छान लें तथा छनी हुई खाद पौध उगाने के लिये प्रयोग करें।

उन्नतशील प्रजातियों का चयन

सब्जियों की उन्नतशील प्रजातियों एवं उनके प्राप्ति के स्त्रोत का भी काफी महत्व है। क्योंकि पौधो का पूरा जीवन, उनकी फलन क्षमता अधिकतर बीजों की गुणवत्ता पर ही निर्भर करती है। प्रजातियों का चयन सब्जी उत्पादन के उद्देश्य जैसे सीधे खाने हेतु स्थानीय या दूरस्थ बाजार या फिर प्रसंस्करण उत्पाद बनाने हेतु कृषि विश्वविद्यालयों/शोध संस्थानों या बीज–कंपनियों द्वरा उस क्षेत्र के लिए संस्तुत किया गया हो, का चयन करना चाहिए। साथ ही बीज विश्वसनीय श्रोत से ही लेना चाहिए।

पौधशाला की तैयारी

क्यारी में प्रति वर्ग मीटर की दर से 2 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद या 500 ग्राम केचुए की खाद डाल कर मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला दें। इससे बीज का जमाव में सुगमता होती है।

भूमि व बीजशोधन

मिट्टी में मौजूद हानिकारक हानिकारक जीवाणुओं/कीटाणुओं को नष्ट करने हेतु भूमि शोधन अत्यन्त आवश्यक है, अन्यथा मिट्टी में पहले से उपस्थित ये हानिकारक जीव पौधो को क्षति पहुँचाते हैं जो न केवल पौध तैयार करने तक ही सीमित रहते हैं बल्कि खेत में रोपण के पश्चात भी पौधो को हानि पहुँचाते हैं। भूमि शोधन कई प्रकार से किया जा सकता हैय मृदा सौर्यीकरण विधि, जैविक विधि और रासयानिक विधि से किया जा सकता हैं। मृदा सौर्यीकरण अत्यंत सरल प्रक्रिया है। गर्मियों की गहरी जुताई कर तेज धूप से हानिकारक जीव नष्ट किया जाता है अथवा पानी से तर किए हुये खेत को पारदर्शी 30 माइक्रोन की पॉलिथीन से 3–4सप्ताह तक ढँककर या फिर फोर्मलीन के 2 प्रतिशत घोल से तर करने के पश्चात पॉलिथीन से 2–3सप्ताह तक ढँक करके किया जाता है। इसके अलावा बुवाई से पूर्व क्यारी की मिट्टी को ट्राइकोडर्मा अथवा बाविस्टीन (5 ग्राम/वर्ग मीटर) से उपचारित करना चाहिए।

बीज शोधन कैप्टान या थीरम नामक फफूंद जनित पाउडर की 2–3ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज की दर से करें। मिर्च तथा बैंगन के बीज का शोधन कार्बेण्डाजिम (बाविस्टीन 2.5ग्राम/किलोग्राम बीज) से करना बहुत लाभकारक है। दवा व बीज बर्तन में डालकर ढक्कन बंद कर दे और अच्छी प्रकार से हिलाएं ताकि दवा बीज के चारों तरफ अच्छी प्रकार चिपक जाय। कुछ सब्जियाँ जैसे टिंडा, करेला, तरबूज इत्यादि में छिलके कठोर होते हैं। अतः इनको कैप्टान के 0.25प्रतिशत (2.5ग्राम/लीटर पानी) घोल में भिगोकर बुआई करने से फफूंद जनित बीमारियों का प्रकोप कम होता है।

क्यारियाँ बनाना

पौधशाला में बीजों की बुआई करने के लिए क्यारियाँ मौसम के अनुसार अलग–अलग प्रकार से बनाई जाती हैं। वर्षा ऋतु में हमेशा जमीन की सतह से 12–15सेंटीमिटर ऊँची क्यारियाँ बनानी चाहिए जबकि रबी मौसम में पौध समतल क्यारियों में भी उगा सकते हैं। ऊँची क्यारियों में पौध का विकास अच्छी प्रकार होता है। क्यारियों की चौड़ाई 2–3फीट और लम्बाई आश्यकतानुसार 3 से 4 मीटर रखते हैं।

बीज की बुआई

बीज की बुवाई कतारों में करनी चाहिए इससे सभी पौधे लगभग एक समान दूरी पर रहने से स्वस्थ व मजबूत होते हैं। इसके लिए सर्वप्रथम क्यारी की चौड़ाई के समानान्तर 5 से.मी. कि दूरी पर 0.5से.मी. गहरी पंक्तियाँ बना लेते हैं तथा इन्ही पंक्तियों में बीज 1 से.मी. कि दूरी पर डालते हैं। क्यारियों में बीज बुआई करने के बाद उनको ढकना अत्यन्त आवश्यक है। बीज बोने के बाद उन्हें सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट की खाद व बालू तीनों को बराबर अनुपात में मिलाकर (1:1:1) क्यारी में इस प्रकार डालें कि सभी बीज ढँक जाए और बीज खुला न दिखाई पड़े। क्यारी में बीजों को मिश्रण से ढँकने के बाद स्थानीय स्तर पर उपलब्ध घासं–फूस की पतली तह से ढँकते हैं ताकि नमी बनी रहे और सिंचाई करने पर पानी सीधे ढँके हुए बीजों पर न पड़े अन्यथा बीज का जमाव प्रभावित होगा। शुरू के पाँच छः दिनों तक हजारे की सहायता से हल्की सिंचाई करें ताकि मिट्टी ज्यादा पानी पाकर बैठ ना जाए। कीटों के प्रकोप व इनके द्वारा प्रसारित विषाणु जनित रोगों से बचाव हेतु पौध 40 मेस वाली नायलान जाली की बनी संरचना के अंदर करनी चाहिए। इससे पौध स्वस्थ व बीमारी रहित तैयार होगी। इस तरह स्वस्थ व बीमारी रहित खासकर टमाटर, मिर्च आदि फसलों की पौध की मांग अधिक होती है, अतः इनसे आमदनी भी अधिक सुनिश्चित की जा सकती है।

सिंचाई

बीज बुआई के बाद प्रारम्भ के 5–6दिनों तक क्यारी को हजारे (फुहारे) की सहायता से हल्की सिंचाई करें व बीज जमने के बाद आवश्यकतानुसार सिंचाई हजारे से कर सकते हैं। इसके बाद क्यारिओन के बीच नालियों से सिंचाई करनी चाहिए।

क्यारियों से पलवार हटाना

बीज बुआई के बाद घास–फूस की परत ढँकी क्यारियों को अंकुरण के बाद समय से हटा लेना चहिए। यह सावधानी पूर्वक देखना चहिए कि जैसे ही 50 प्रतिशत बीजों से सफेद धागेनुमा आकार निकलता दिखे घास–फूस जिससे भी क्यारी ढँके हों हटा ले अन्यथा मुलांकुर बड़ा होने पर पौधा कमजोर होकर जड़ के पास से ही गल कर गिरने लगते है।

खरपतवारप्रबन्धन

व्यावसायिक स्तर पर पौधशाला तैयार करते समय खरपतवारनाशी जैसे स्टाम्प की 3 मी.ली. मात्रा/लीटर पानी की दर से घोलकर बीज बुआई के 48 घंटे के अन्दर अच्छी तरह छिड़क देते हैं। इससे खरपतवार की समस्या का नियंत्रण हो जाता है और यदि बाद में कोई खरपतवार उगते हैं तो उन्हें निकाल देते हैं। इसके अलावा क्यारियों में यदि खरपतवार उग आयें तो उन्हें बराबर निकलते रहना चाहिए।

पोषक तत्व प्रबन्धन

साधारणतया सब्जियों की पौध तैयार करते समय रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग न करें। यदि मिट्टी उपजाऊ नहीं है तो 3–4 कि.ग्रा. सड़ी हुई कम्पोस्ट खाद प्रति वर्ग मीटर की दर से मिट्टी में अच्छी प्रकार से मिला देवें। यदि बढ़वार की अवस्थाओं में पौधों में पोषक तत्वों की कमी का आभास हो तो घुलनशील उर्वरक जैसे एन.पी.के. (19:19:19) की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल कर एक सप्ताह के अन्तराल पर पौधों पर पर्णीय छिड़काव करें। यदि खेत की मिट्टी में उपजाऊपन अधिक हो और पौधा बहुत तेजी से विकास कर रहा हो तो सिंचाई कम करें।

2.प्रो–ट्रे (मिट्टी रहित माध्यम) में पौध उत्पादन

अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ व सफल व्यावसायिक स्टार पर सब्जियों की पौधप्लास्टिक की बनी प्रो–ट्रेज में तैयार की जाती है। इसे कीट रोधी नायलान जाली युक्त ग्रीन(पॉली)हाउस या छायादार जाली के अंदर किया जाता है, परंतु खुले में भी संभव है। बाजार में प्रो–ट्रेज विभिन्न आकार के छिद्रों व इनकी संख्या में आते हैं। आमतौर पर 98 प्लग या छिद्र वाली ट्रे जिसका आकार 1.25–1.5इंच हो टमाटर, बैंगन, मिर्च के लिए और 50 छिद्र वाली(2–2.5इंच आकार) वाली ट्रेज खीरा, खरबूजा, तरबूज, लौकी इत्यादि के लिए उपयुक्त होती हैं। प्रो–ट्रेज के लिए प्रयुक्त माध्यम में कोकोपिट (नारियल का बुरादा) प्रमुख है, जिसे वर्मीकुलाइट व परलाइट के साथ 3:1:1के अनुपात के मिश्रण में प्रयोग करने की सिफारिश की जाती है। इसके अलावा कोकोपिट को केचुएँ की खाद के साथ 4:1के अनुपात में भी प्रयुक्त किया जा सकता है। प्रो–ट्रेज में सब्जियों के बीज की बुवाई एक बीज प्रति छिद्र करते हैं। बुवाई के पश्चात ट्रेज को 2–3दिनों (अंकुरण होने से पूर्व) तक पॉलिथीन से टंक देते हैं, इससे जमाव उत्तम व जल्दी होता है। अहतियात के तौर पर बीज जमाव के लगभग एक सप्ताह बाद कार्बेण्डाजिम मेंकोजेब के मिश्रित तत्व की 2.5ग्राम/लीटर के दर से पौधो की जड़ों को तर करने से नर्सरी के फफूंद जनित रोग जैसे आर्द्रपतन के प्रकोप से बचा जा सकता है। एक छिडकाव कीटनाशी इमिडाक्लोप्रिड या थायमेथोक्साम (0.3ग्राम/ली.) का कर सकते हैं। पोषण हेतु पौधों को एन.पी.के. (19:19:19) की 2 ग्राम/लीटर पानी के घोल की दर से एक सप्ताह के अन्तराल पर पौधों पर पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। मिट्टी की अपेक्षा प्रो–ट्रेज में पौधो की जड़ व तने का विकास तेजी से व समान होता है जिससे पौध लगभग एक सप्ताह पूर्व तथा एक साथ तैयार तैयार हो जाती हैं।

साथ ही बदलते परिवेश में देखा जा रहा है कि किसान भाइयों को उन्हीं सब्जियों की अच्छी कीमत मिल पाती है जो सब्जियाँ सबसे पहले बाजार में आ जाती हैं। जैसे–जैसे सब्जियों की अधिक मात्रा बाजार में आने लगती है उनकी कीमत कम होने लगती है। ऐसी परिस्थिति में यदि समय से पूर्व सब्जियों की पौध तैयार करके कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती की जाय तो काफी लाभदायक सिद्ध हो सकता है। इसके लिए दिसम्बर–जनवरी माह में तैयार की गयी पौध का ही इस्तेमाल किया जाता है। जिसे फरवरी माह में तापमान अनुकूल

होते ही रोपण हेतु प्रदान किया जा सकता है। इससे अगेती खेती करने वाले किसान को अन्य की तुलना में एक से डेढ़ माह पूर्व फलत लेकर अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए प्रो –ट्रेज (2 इंच आकार के छिद्र वाले) या फिर पॉलिथीन की थैलियों (6x4 इंच आकार) में किसी पॉलीहाउस या प्लास्टिक संरचना के अंदर तैयार की गयी पौध का ही इस्तेमाल कर सकते हैं जो नर्सरी में आसानी से संभव है।

तैयार पौध की विक्री

मिट्टी की क्यारिओं में उगाई गयी अधिकतर फसलों की पौध लगभग 4–5सप्ताह में रोपाई हेतु तैयार हो जाती हैं। पौध उखाड़ने से पहले हल्की सिंचाई करनी चाहिए इससे पौधे आसानी से उखड़ जाते हैं और जड़े टूटती नहीं। पौधो को जड़ सहित उखाड़कर बंडल बनाकर विक्री पटल पर अथवा सीधे खेत से क्रेता किसान को बेंचा जा सकता है। प्रो–ट्रेज में पौध अपेक्षाकृत कम समय में तैयार हो जाती है। तैयार पौध को ट्रे से पहले निकालने की आवश्यकता नहीं पड़ती और इन्हे सीधे ट्रे सहित बेंचा जा सकता है और ट्रे पुनः उपयोग हेतु वापस भी लिया जा सकता है।

शुष्क क्षेत्र में बागवानी विकास की तकनीकियाँ

अकथ सिंह एवं पी. आर. मेघवाल
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

मरुस्थलीय क्षेत्रों में वर्षा की अनिष्चितता के कारण फसलों की परम्परागत खेती से फसल उत्पादन में जोखिम बना रहता हैं। इस क्षेत्र में समय पर पर्याप्त मात्रा में वर्षा का न होना, बीच–बीच में सूखे की स्थिति बनना फसल अवस्थाओं की जरूरत के हिसाब से वर्षा का वितरण ठीक से न होना तथा समय से पूर्व मानसून का विदा होना इत्यादि कारणों से बारानी खेती से होने वाला उत्पादन प्रभावित होता हैं। इस क्षेत्र की रेतीली हल्की मिट्टी में जीवांष की मात्रा कम होने से बरसाती जल को सोख कर रोकने की क्षमता में कमी तथा किसान की माली हालत कमजोर होने की वजह से उन्नत कृषि तकनीकी सिफारिषो को न अपनाने पर फसल उत्पादन में अनिष्चितता बनी रहती हैं। एसी स्थिति में बहुउद्देषीय व बहुवर्षीय फल वृक्षों की चयनित उन्नत किस्मों को अपनाकर अधिक आमदानी प्राप्त की जा सकती हैं।

शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फल वृक्ष/किस्मों का चुनाव

शुष्क क्षेत्रीय फलो व उनकी किस्मों का चयन नीचे दी गई तालिका के अनुसार किया जा सकता हैं।

तालिका 1: शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फल वृक्ष/किस्में

फल वृक्ष	उपयुक्त उन्नत किस्में
बेर	गोला, काजरी गोला, मुन्डिया (अगेती), सेब, बनारसी, कैथली, गोमा कीर्ती (मध्यम), उमरान, इलायची,टीकडी (पछैती)
अनार	जालोर बेदाना, गणेष, जी–137, जी–131, मृदुला, अरकता, भगवा इत्यादि
आँवला	चेकैया, एन.ए.–7, कंचन, कृष्णा, आनन्द–2
गून्दा	काजरी–2025, काजरी–2021, काजरी–2012 व अन्य स्थानीय किस्मे
करौन्दा	पन्त मनोहर, पन्त सुदर्षन, पन्त सुवर्णा, सी.जेड.के.2011, सी.जेड.के.2022
नीम्बू	कागजी, विक्रम,प्रमालिनी, बारामासी
बेल	धारा रोड़, फैजाबादी लोकल, एन.बी.–5, एन.बी.–9, लाल जीत, सांभीपुरी, पन्त उर्वषी, पन्त अपर्णा
खजूर	हलावी, बारही, खुनेजी, मस्कट, जहीदी, मेडजूल,

तालिका 1 में दिये गए शुष्क क्षेत्रीय फल वृक्षों का चयन सिंचाई पानी की उपलब्धता के अनुसार करना चाहिए। बेर, करौन्दा, गून्दा, झड़ बेर इत्यादि को शुरू में पूरक सिंचाई या वर्षा जल संग्रहण द्वारा पनपाया जा सकता हैं। बड़े होने पर ये फल बारानी अवस्था में भी कुछ उत्पादन मानसून वर्षा की मात्रा के हिसाब से दें जाते हैं अन्य फल वृक्ष जैसे अनार आवँला, सीताफल, नीम्बू, खजूर इत्यादि सिंचाई पानी की उपलब्धता होने पर लगाए जा सकते हैं।

फलवृक्ष प्रवर्धन एवं बाग की स्थापना

अधिकतर फल वृक्षों का प्रवर्धन वानस्पातिक प्रसारण विधि से ही किया जाता हैं लेकिन कुछ फल वृक्ष जैसे, नीम्बू, गोन्दा, करौन्दा, झड़ बेर इत्यादि को बीज द्वारा भी सफलता पूर्वक लगाया जा सकता हैं। विभिन्न फलदार पौधों की प्रसारण विधियाँ, लगाने की दूरी तथा समय इत्यादि तालिका 2 में दर्शाया गया हैं।

सूखे से मुकाबले के लिए बेर की खेती

शुष्कक्षेत्र बागवानी में बेर का प्रमुख स्थान है। वर्षा आधारित उद्यानिकी में बेर एक ऐसा फलदार पेड़ है जो कि एक बार पूरक सिंचाई से स्थापित होने के पश्चात वर्षा के पानी पर निर्भर रहकर भी फलोत्पादन कर सकता है तथा ऐसी स्थिति में फलों की उपज मुख्य रूप से उस वर्ष में होने वाली वर्षा की मात्रा पर निभर्र करती हैं मरूस्थल में बार–बार अकाल की स्थिति से निपटने के लिए भी बेर की बागवानी अति उपयागी सिद्ध हो सकती है यह एक बहुवर्षीय व बहुपयोगी फलदार पेड है जिसमें फलों के अतिरिक्त पेड़ के अन्य भागों का भी आथिर्क महत्व है। इसकी पतियॅा पशुओं के लिए पोष्टिक चारा प्रदान करती है जबकि इसमें प्रतिवर्ष अनिवार्य रूप से की जाने वाली कटाई – छंटाई से प्राप्त काटेदार झाड़िया खेतो व ढ़ाणियों की रक्षात्मक बाड़ बनाने व भण्डारित चारे की सुरक्षा के लिए उपयोगी है शुष्क क्षेत्रों में अल्प, अनियमित व अनिष्चित वर्षा के देखते हुए बेर की खेती बहतु उपयागी है क्योंकि पाधै एक बार स्थापित होने के बाद वर्ष के किसी भी समय होने वाली वर्षा का यह समूचित उपयोग कर सकते है।

पौधे लगाना : खेते की तैयारी मई–जून महीने में 6–7 मीटर की दूरी पर वर्गाकार विधि से रेखांकन करके 2′X2′X2′ आकार के गढ्ढ़े खोदने के साथ शुरू करें इनको कुछ दिन धूप में खुला छोडने के बाद ऊपरी मिट्टी में 20–25 किलो देसी खाद व 100 ग्राम एन्डोसल्फान (4प्रतिषतचूर्ण) प्रति गढ़्डा मिला कर भराई करके मध्य बिन्दु पर एक खूटी गाड दें। इसके उपरान्त पहली वर्षा से जुलाई माह में जब गड्ढ़ो की मिट्टी जम जाए तो इसमें पहले से कलिकायन किए पाधैों को प्रतिरोपित करें। प्रत्यारोपण करने के लिए पौलीथीन की थैली को एक तरफ से ब्लेड से काटकर जड़ों वाली मिट्टी को यथावत रखते हुए पालेीथीन को अलग करें तथा पौधों को मिटट्ी के साथ गड्ढ़ो के मध्य बिन्दु पर स्थापित करके पैाधों के चारो तरफ की मिट्टी अच्छी तरह दबाकर तुरन्त सिंचाई करे। अगले दिन करीब दस लीटर पानी प्रति पौधा फिर देवे। इसके बाद वर्षा की स्थिति को देखते हुए जरूरत के अनुसार 5–7 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहें। सर्दी के मौसम तक पौधे यथावत स्थापित हो जाते है तब 15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई कर सकते ह। जबकि गर्मी के मासैम में रापेाई के पहले वर्ष में एक सप्ताह के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए।

कॅटाई – छॅटाई : बेर में कटाई–छॅटांई का कार्य बहतु महत्वपूर्ण हेाता है। प्रारम्भिक वर्षो में मलू वृन्त से निकलने वाली शाखाओं को समय – समय पर काटते रहे ताकि कलिकायन किए हुए ऊपरी भाग की उचित बढ़ोंतरी हो सके। शुरू के 2–3 वर्ष में पौधों को सख्त रूप व सही आकार देने के लिए इनके मुख्य तने पर 3–4 प्राथमिक शाखाऍ यथोचित दूरी पर सभी दिशाओं में चुनते है इसके बाद इसमें प्रति वर्ष कृन्तन करना अति आवश्यक होता है क्योकि बेर में फूल व फल नयी शाखाओं पर ही बनते है। कॅटाई – छॅटाई करने का सर्वोत्तम समय मई का महीना होता है जब पौधे सुषुप्तावस्था में होते है।

खाद एवं उर्वरक : खाद एवं उर्वरकों की आवयकता क्षेत्र विशेष की मिट्टी की उर्वरता शक्ति के अनुसार भिन्न–भिन्न हो सकती है तथा पौधों की आयु पर भी निर्भर करती है फिर भी एक सामान्य जानकारी के लिए खाद एवं उर्वरकां की मात्रा पाधैों की उम्र के अनुसार तालिका–1 में दर्शाई गई है

पौधों की आयु (वर्ष)	(किग्रा॰प्रतिपौधा प्रतिवर्ष)	ग्राम प्रति पौधा प्रति वर्ष		
	गोबर की खाद	सिगल सपुर फास्फेट	यूरिया	म्यूरेट आफ पोटाश
1	10	300	220	80
2	15	600	440	160
3	20	900	660	250
4	25	1200	1100	350
5 व अधिक	30	1500	1300	400

देसी खाद, सुपर फास्फेट व म्यूरेट आफ पोटाश की पूरी मात्रा व नत्रजन युक्त उर्वरक यूरिया की आधी मात्रा जुलाई माह में पेड़ों के फैलाव के हिसाब से अच्छी तरह मिलाकर सिंचाई करे। बची नत्रजन की आधी मात्रा नवम्बर माह में फल लगने के पष्चात देनी चाहिए।

सिंचाई : बेर में एक बार अच्छी तरह स्थापित हो जाने के बाद बहतु ही कम सिंचाई की जरूरत पड़ती है। गर्मी की सुषुप्तावस्था के बाद 15 जून तक अगर वर्षा नहीं हो तो सिंचाई आरम्भ करें ताकि नई बढ़वार समय पर शुरू हो सके। इसके बाद अगर मानसून की वर्षा का वितरण ठीक हो तो सितम्बर तक सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। 15 सितम्बर के बाद फलू आना शुरू करते है और 15 अक्टूबर तक फल लग जाते है इस दौरान हल्की सिंचाई करें। इसके बाद अगर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो 15 दिन के अन्तर पर सिंचाई अवश्य करें। किस्म विशेष के सम्भावित पकने के समय से 15 दिन पहले सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए ताकि फलों में मिठास व अन्य गुणों का विकास अच्छा हो सके।

प्रमुख कीट एवं व्याधियां

फल मक्खी : यह कीट बेर को सबसे अधिक नकुसान पहुॅचाता है इस मक्खी की व्यस्क मादा फलों के लगने के तुरन्त बार उनमें अण्डे देती है ये अण्डे लार्वा में बदल कर फल को अन्दर से नुकसान पहुॅचाते है इसके आक्रमण से फलों की गुठली के चारो ओर एक खाली स्थान हो जाता है तथा लटे अन्दर से फल खाने के बाद बाहर आ जाती है। इसके बाद में मिट्टी में प्यूपा के रूप में छिपी रहती है तथा कुछ दिन बाद व्यस्क बनकर पुनः फलों पर अण्डे देता है इसकी राके थाम एवं नियत्रंण के लिए मई – जनू में बाग की मिट्टी पलटे। फल लगने के बाद जब अधिकांश फल मटर के दाने के साइज के हो जाए उस समय मोनोक्रोटोफास 36 एस॰एल॰ या एन्डोसल्फान 35 ई॰सी॰ 1 मिलीलीटर प्रतिलीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 20–25 दिन बाद करें।

छालभक्षी कीट : यह कीट नई शाखाओं के जोड़ पर छाल के अन्दर घुस कर जोड़ को कमजोर कर देता हैफलस्वरूप वह शाखा टूट जाती है जिससे उस शाखा पर लगे फलों का सीधा नुकसान होता है। इसकी रोकथाम के लिए खेत को साफ सुथरा रखे, गर्मी में पेड़ां के बीच मे गहरी जुताई करें। जुलाई – अगस्त में डाइक्लोरवास 76 ई॰सी॰ 2 मिलीलीटर प्रतिलीटर पानी में घोल बनाकर नई शाखाओं के जोड़ों पर दो – तीन बार छिड़काव करना चाहिए।

छाछया (पाउडरी मिल्डयू या चूर्णी फफूॅद) : इस रोग का प्रकोपवर्षा ऋतु के बाद अक्टबूर – नवम्बर में दिखाईपड़ता है इससे बेर की पतियां, टहनीयों व फूलों पर सफेद पाउडर सा जमा हो जाता है तथा प्रभावित भागोंकी बढ़वार रुक जाती है और फल व पतियॉ गिर जाते है। इसकी रोकथाम के लिए

केराथेनएल॰सी॰ 1 मिलीलीटर या घुलनशील गधंक 2 ग्राम प्रतिलीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। 15 दिन के अन्तर पर दो – तीन छिड़काव पूर्ण सुरक्षा के लिए आवश्यक होते है।

अनार की खेती

पौधे तैयार करना : सख्त काष्ठ कलम अनार के वानस्पतिक प्रर्वधन की सबसे आसान तथा व्यवसायिक विधि है। कलमें तैयार करने के लिए एक वर्षीय पकी हुई टहनियों को चुनते है। टहनियों की जब वार्षिक काट–छाँट होती है, उस समय लगभग 15–20 से.मी. लम्बी स्वस्थ कलमें जिनमें 3–4 स्वस्थ कलियाँ मौजूद हो को काट कर बंडल बना लेते है। ऊपर का कटाव आँख के 5.5 से.मी. ऊपर व नीचे का कटाव आँख के ठीक नीचे करना चाहिए। पहचान के लिए कलम का ऊपरी कटाव तिरछा व नीचे का कटाव सीधा बनाना चाहिए। तत्पष्चात कटी हुई कलमों का 0.5 प्रतिषत बाविस्टीन या कैप्टान या ब्लाइटास के घोल में भिगों लेना चाहिए तथा भिगे हुए भाग को छाया में सुखा लेना चाहिए। कलमों को लगाने से पहले आधार भाग का 6 से.मी. सिरा 50 प्रतिषत इथेनोल में बने 2000 पीपीएम (2 ग्राम/ली.) आई.बी.ए. के घोल में 55 सैकण्ड के लिए उपचारित करें इससे जड़े शीघ्र फुट जाती है। कलमों को उपयुक्त मिश्रण से भरी हुई थैलियों में थोड़ा तिरछा करके रोपण कर देते है। कलम की लगभग आधी लम्बाई भूमि के भीतर व आधी बाहर रखते है। दो आँखे भूमि के बाहर व अन्य आँखे भूमि में गाड़ देनी चाहिए।

बाग की स्थापना : अनार का बगीचा लगाने के लिए रेखांकन कार्य एवं गड्ढा खोदने का कार्य मई माह में सम्पन्न कर लेना चाहिए। इसके लिए वर्गाकार या आयताकार विधि से 4×4 मी (628 पौधे प्रति हैक्टर) या 5×3 मी (666 पौधे प्रतिहैक्टर) की दूरी पर, 60×60×60 सेमी आकार के गड्ढे खोदकर गड्ढों को 0.1 प्रतिषत कार्बेन्डाजिम के घोल से अच्छी तरह मिला देना चाहिए तत्पष्चात 50 ग्राम प्रति गड्ढे के हिसाब से क्लोरोपाइरीफॉस दवा का बुखाव भी गड्ढे भरने से पहले अवष्य करना चाहिए। जिन स्थानों पर बैक्टीरियल ब्लाइट की समस्या हो वहाँ प्रति गड्ढे में 100 ग्राम प्रति गड्ढा कैल्षियम हाइपोक्लोरॉइड से भी उपचार करना चाहिए। ऊपरी उपजाऊ मिट्टी में 10 कि.ग्रा. सड़ी गोबर या मींगनी की खाद 2 कि.ग्रा. वर्मीकम्पोस्ट, 2 कि.ग्रा. नीम के खली तथा यदि सम्भव हो तो 25 ग्राम ट्राइकोडरमा आदि को मिलाकर गड्ढों को ऊपर तक भर कर पानी डाल देना चाहिए जिससे की मिट्टी अच्छी तरह बैठ जाए। पौधरोपण से एक दिन पहले 100 ग्राम नत्रजन 50 ग्राम फास्फोरस तथा 50 ग्राम पोटाष प्रति गड्ढो के हिसाब से डालने से पौधों की सीापाना पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। पौध रोपण के लिए जुलाई–अगस्त का समय अच्छा रहता है परन्तु पर्याप्त सिंचाई सुविधा उपलब्ध होने पर फरवरी–मार्च में भी पौधे लगाये जा सकते है।

सधाई एवं काट–छांट : अनार के पौधों में आधार से अनेक शाखाएँ निकलती रहती है। यदि इनकों समय–समय पर निकाला न जाए तो अनेक मुख्य तने बन जाते हैं जिससे उपज तथा गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उपज तथा गुणवत्ता की दृष्टि से प्रत्येक पौधों में 3–4 मुख्य तने रखना सबसे उपयुक्त पायी गया।

अनार में 3–4 साल तक एक ही परिपक्व शाखाओं के अग्रभाग में फूल एवं फल खिलते रहते है। अतः नियमित काँट–छाँट आवष्यक नहीं है। सूखी, रोगग्रस्त टहनियों बेतरतीब शाखाओं तथा शकर्स को सुषुप्ता अवस्था में निकालते रहना चाहिए।

खाद एवं उर्वरकः उर्वरक एवं सूक्ष्म पौषक तत्व निर्धारित करने के लिए मृदा परीक्षण अति आवष्यक है। सामान्य मृदा में 10 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद 250 ग्राम नाइट्रोजन 125 ग्राम फास्फोरस तथा 125 ग्राम पोटेषियम प्रतिवर्ष प्रतिपेड़ देना चाहिए प्रत्येक वर्ष इसकी मात्रा इस प्रकार बढ़ाते रहना चाहिए कि पांच वर्ष बाद प्रत्येक पौधों को क्रमषः 325 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फास्फोरस तथा 250 ग्राम पोटेषियम दिया जा सके।शुरू मे तीन वर्ष तक जबकि पौधों में फल नहीं आने रहे हो की अवस्था तक उर्वरको के तीन बार में जनवरी, जून तथा सितम्बर में देना चाहिए तथा चौथे वर्ष में जब फल आने लगे तो फलत लेने के मौसम (बहार) के अनुसार दो बार में देना चाहिए। शुष्क क्षेत्रों में मृग बहार लेने की संस्तुति की जाती

है। अतः उर्वरकों को मध्य जनवरी से फरवरी तथा जून में में पौधों के चारों तरफ एक से डेढ़ मीटर की परिधि में 15–20 से.मी. गहराई में डालकर मिट्टी मे मिला देना चाहिए। अनार की खेती में सूक्ष्म तत्वों का एक अलग महत्त्व है इसके लिए जिंक सल्फेट (0.6 प्रतिषत) या मल्टीबोक्स 2 मिली/लीटर का पर्णीय छिड़काव फूल आने तथा फल बनने के समय करना चाहिए।

सिंचाई एवं जल प्रवंधनः अनार के सफल उत्पादन के लिए सिंचाई एक महत्त्वपूर्ण कारक है। गर्मियों में 5–7 दिन, सर्दियों में 10–12 दिन तथा वर्षा ऋतु में 10–15 दिनों के अन्तराल पर 20–40 लीटर/प्रति पौधा सिंचाई की आवष्यकता होती है। अनार में टपक सिंचाई पद्धति अत्यधिक लाभप्रद है क्योंकि इससे 20–43 प्रतिषत पानी की बचत होती है साथ ही 30–35 प्रतिषत उपज में भी बढ़ोतरी हो जाती है तथा फल फटने की समस्या की भी कुछ सीमा तक समाधान हो जाता है। मृदा नमी को संरक्षित रखने के लिए काली पॉलीथीन (150 गेज) का पलवार बिछाना तथा केओलीन के 6 प्रतिषत घोल का पर्णीय छिड़काव करना काफी लाभप्रद रहता है।

बहार नियंत्रण : अनार में वर्ष भर फूल आते रहते है तथा इसके तीन मुख्य मौसम हैं जिन्हें अम्बे बहार (जनवरी–फरवरी) मृग बहार (जून–जुलाई) और हस्तबहार (सितम्बर–अक्टूबर) कहते है। वर्ष में कई बार फूल आना व फल लेते रहना उपज एवं गुणवत्ता की दृष्टि से ठीक नहीं रहता शुष्क क्षेत्र में पानी की कमी तथा यहाँ की जलवायु के अनुसार मृग बहार की फसल लेने की संस्तुती की जाती है। इसमें जून–जुलाई में फूल आते है तथा दिसम्बर–जनवरी में फल तुड़ाई के लिए उपलब्ध हो जाते हैं अर्थात अधिकतर फल विकास वर्षा ऋतु में पूर्ण हो जाता है। अवांछित बहार नियंत्रण के लिए सिंचाई बंद कर देते हैं। कुछ रसायनों जैसे थायोयूरिया, इथ्रेल (1 मिली/ली.) के पर्णीय छिड़काव द्वारा भी पतझड़ लाकर यह कार्य किया जा सकता है।

रोग एवं कीट प्रबंधन : शुष्क क्षेत्रों में अपेक्षाकृत रोग एवं कीटों की समस्या कम रहती है अनार में लगने वाले प्रमुख रोग एवं कीट तथा उनके नियंत्रण के उपाय निम्न लिखित है।

रोग	लक्षण	उपाय
पत्ती व फल धब्बा रोग	यह एक फुंद जनित रोग है इसमें पत्तियों एवं फलों के ऊपर फफूंद के भूरे धब्बे दिखाई देते है जिससे फलों के बाजार भाव में गिरावट आ जाती है।	कार्बेन्डाजिम (1.0 मि.ली./ली.) या मेन्कॉजेब (2.5 ग्रम/लीटर) या कापर आक्सीक्लोराइड (2.5 ग्रा/ली) या थायोफनेट मिथाइल (1.5 मिली/ली) का 15–20 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव धब्बे दिखाई पड़ते ही कसे चाहिए।
फल सड़न रोग	फल काले पड़कर सड़ जाते है।	फूल आने के समय तथा उसके 20 दिन बाद उपर्युक्त दवा में से किसी एक दवा का छिड़काव करना चाहिए।
उदई	शुष्क क्षेत्र में अनार की पौध सीपना में दीमक का प्रकोप एक गंभीर समस्या है।	सड़े हुए गोबर को ही पौधों में डालना चाहिए। क्विनालफॉस (15 प्रतिशत) या मिथाइल पैराथिमान 2 प्रतिषत 2.5 किग्राा/है से मृदा उपचार करना चाहिए। खड़ी फसल में क्लोरपाइरीफॉस 2 मिली/ली घोल का प्रयोग करना चाहिए।
अनार की तितली	प्रौढ़ तितली द्वारा दिये गये अंडो से निकली सूण्डियाँ फलों को छेदकर अन्दर प्रवेष करती है तथा फल के गूदे को खाती रहती है।	प्रभावित फलों की तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए तथा मोनोक्रोटोफॉस (1 ग्राम/ली.) या फास्फोमिडॉन (0. 05 प्रतिषत) या कार्बेरिल (4 ग्राम/लीटर) दवा का छिड़काव करना चाहिए।

गून्दे की बागवानी

पौधे लगाना : गन्दे के पाधै जुलाई –सितम्बर में लगाने चाहिए क्योकि उस समय तक उसी वर्ष में मइ जून मे बोये गए बीजो से पाधै रोपाई योग्य हो जाते है कलिकायन विधि से तैयार पाधै को भी सितम्बर लगा सकते है। पौधो व कतारो के बीच की दूरी 6 मीटर रखकर वर्गाकार विधि से क्षेत्र का रेखांकन कर लें। निर्धारित स्थान पर खूंटिया गाड़ कर 2 X2 X2 फीट आकार के गड्ढे खोदकर तैयार करले। यह कार्य मई जनू में करना चाहिये।

छंटाई व कटाई : गन्ू दे में फल व फुल पिछले वर्ष की शाखाओं पर ही लगते है इसलिए इसमे प्रतिवर्ष नियमित कटाई की जरूरत नहीं पड़ती है। परन्तु शुरू के दो सालो में इसे एक मजबूत शाखाओं की संतुलित वृद्धि के लिए छंटाई करना अत्यावष्यक होता है। छंटाई करते समय एक दूसरे से ऊपर से गुजरने वाली तथा नीचे की ओर झुकी हुई शाखाओं को धारदार सिकेटियर से कटाई करें। इसी तरह सूखी हुई टहनीयाँ तथा रोगग्रस्त शाखाओं को समय–समय पर काटते रहना चाहिए।

सिंचाई : पाधैो की रोपाई के प्रथम दो वर्षों में नियमित रूप से सर्दियों में 15 दिन तथा गमियी मे 7–10 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। जब पौधे 3–4 साल के हो जाए तब उनमे फलन साधारणतया शुरू हो जाता है। इस समय सिंचाई का उचित प्रबंधन अति आवश्यक है। बड़े पेड़ो में नवम्बर से जनवरी तक सिंचाई बन्द कर देने से पत्ते पीले पड़ कर गिरने लगते है लेकिन प्राकृतिक रूप से सभी पत्ते एक साथ नहीं गिरते है इसलिए जनवरी के अन्तिम सप्ताह में पेड़ों से सभी पत्ते हाथ से तोड़ देने चाहिए। ऐसा करने से फलू व फल जल्दी व एक साथ आते है पत्ते तोड़ने के बाद फरवरी के दूसरे सप्ताह दे"ाी खाद या कम्पोस्ट (10–15 किलोग्रम प्रति पेड़) डाल कर अच्छी तरह 6 इंच गहरा खोद कर मिट्टी में मिलाकर सिंचाई शुरू करें। जैसे ही तापमान बढने लगता है नई बढवार व फूल एक साथ शुरू हो जाते है। इस दौरान हल्की सिंचाई 7–10 दिन के अन्तराल पर जारी रखे ।

खाद एवं उर्वरक : गून्दे में खाद एवं उर्वरको की मात्रा पर ज्यादा अनसुधान नहीं हुआ है फिर भी अच्छी वानस्पतिक बढवार के लिए प्रतिवर्ष 15–20 किलो गोबर की सड़ी खाद जुलाई – अगस्त में तथा पुनः 10–15 किलो कम्पोस्ट या वर्मी कम्पोस्ट फल लगने से पहले फरवरी के महीने मे देने से भरपूर फलो की पैदावार होती है।

फूल व फलो का गिरना : फरवरी के दूसरे व तीसने सप्ताह में जब फूलन व फलन शुरू होता है तो कई बार तापमान अचानक बढ जाता है या फिर गर्म हवा चलने लग जाती है ऐसी स्थिति फलू व फल अत्यधिक मात्रा मे गिरने लगते ह। इसको कम करने लिए बगीचे में नमी बनाएँ रखें, हो सके तो कभी–कभी पानी से पाधैो पर छिड़काव भी कर सकते है। इसके अलावा प्लानोफिक्स 5 मिली दवा 15 लीटर पानी मे मिलाकर फूलो व फलो पर छिड़काव करके भी नुकसान कम किया जा सकता है। अगर संभव हो तो फूल व फल लगते समय (फरवरी–मार्च) में 25 प्रतिशत ग्रीन शेडिग नेट से पौधो पर छाया करने से भी फायदा हो सकता है।

फलो को सुखाना : गून्दे के फलो को सुखाकर परिरक्षित करना बहुत ही सरल है। सबसे पहले गून्दे के फलो को डण्ठल सहित 0.3 प्रतिषतपोटेषियम मेटाबाइसलफाइट घलु पानी मे उबाल ले। जब फल दबाने से मुलायम मालूम होवे तब पानी से बाहर निकालकर पंखे के नीचे इस तरह सुखाएं कि फलो के चारो ओर कहीं भी पानी की बून्दे नजर नहीं आवें। जब फल ठण्डे हो जाए तब इसके डण्ठल अलग करके एक–एक फल को अंगूठे व अंगुलियों के बीच दबा कर गुठली अलग कर लें। अब इन्हे धूप या बिजली चालित ड्रायर या सोलर ड्रायर में तब तक सुखाए जब तक फल हाथ से दबाने पर टूटने लगे तथा कुर कुरे मालुम हों। इस अवस्था में इनको पोलीथीन में पैक करके भण्डारण करें।

उत्तम सांगरी के लिए खेजड़ो में कलिकायन एवं उत्पादन प्रबंधन

कलिकायन विधि से तैयार पौधो का उचित उत्पादन प्रबंधन कर हर वर्ष उत्तम गुण की सांगरी के साथ–साथ लूंग भी लिया जा सकता है। ऐसे पौधे कम ऊँचाई के होने के कारण इनकी कटाई–छंटाई तथा सांगरी की तुड़ाई भी आसानी से की जा सकती है। कलिकायन विधि से चयनित उत्तम सांगरी व लूंग वाली खेजड़ी के पेड़ो का बगीचा निम्न विधियों से विकसित किया जा सकता है।

स्वस्थानिक कलिकायन से बगीचा लगाना : इस विधि से मूलवृन्त के बीजू पौधे सीधे खेत मे ं लगाए जाते हों फसल पद्धति की आवष्यकतानुसार 6 मीटर ×8 मीटर या 8 मीटर ×8 मीटर या 6 मीटर ×16 मीटर की दूरी पर 2 ×2 ×2 मीटर आकार के गड्ढढे मई माह में खोदकर इन्हें कुछ दिनों के छोड़ देते हैं। इसके बाद इसमें दस किलो गोबर की सड़ी खाद को गड्ढढे की ऊपरी मिट्टी में मिलाकर भर दें। मई जून खेजड़ी की पूर्ण पकी फलियों (खोखो) से बीज निकालकर बुवाइ के लिए रख लें। जुलाई में प्रथम वर्षा होने के बाद प्रत्यक में 3–4 बीज लगभग एक इंच की गहराई पर गड्ढढो के मध्य में बुवाई करें। इस दौरान वर्षा का लम्बा अन्तराल होने पर गड्ढढों में हल्की सिचांई करें ताकि अकरूंण के बाद पैाधों की बढ़वार हो सके। प्रति गड्ढढे एक–दो बीजू पौधो को छोडकर शेष को निकाल दें। खेत में गड्ढढे में बीजों की सीधी बुवाई का फायदा यह होता है कि उनकी जड़े सीधी व अधिक गहराई में शुरू ही विकसित हो जाती है जिससे आग जाकर इनके अधिक सूखा सहन करने की क्षमता विकसित हो जाती है। अगले वर्ष की वर्षा ऋतु तक इन पौधों की निराई–गुडाई तथा अन्य कृषि क्रियाएँ करते है। जुलाई माह में प्रत्यके गड्ढढे में एक सीधे तने वाला पौधा छोड़कर बाकी को निकाल लें। अब इनमें चिन्हित मातृ वृक्ष से कलिका लेकर कलिकायन कर लें। जिस पौधे पर कलिकायन सफल नहीं हो, उनके नीचे जमीन से निकल रही नवोदित कल्लों को बढने दें ताकि उनकी उचित मोटाई होने पर फिर से कलिकायन किया जा सके। इस तरह दो वर्ष में स्वस्थानिक कलिकायन विधि से पूरा बगीचा तैयार हो जाता है।

पौधशाला में कलिकायन कर पौधे तैयार करना : खेजड़ी की पूर्ण पकी तथा सूखी फलीयों से बीज निकाल लेते है। इन बीजो को 30×15 से.मी. आकार की पोलीथीन की थैलियों में गोबर की खाद, बालू मिट्टी तथा चिकनी मिट्टी (1:5:1) के मिश्रण से भरकर बेड़ में लाईन से जमाकर बीजों की बुवाई जुलाई माह में कर दी जाती हैं अगले वर्ष जून माह मे जब पौधो के तने की मोटाई लगभग 5–8 मि.मी. हो जाए तब इन पर चयनित मातृ वृक्ष से कलिका लेकर कलिकायन कर दिया जाता है। कलिकायन के एक माह के भीतर इसमे कलिका फूटने लगती है तथा तेजी से बढना आरम्भ कर देती है। लगभग दो महीने बाद इनको एक बार नई द्वितीयक नर्सरी क्यारी में स्थान्रित किया जाता है जिसके 10–15 दिन बाद इन पौधों को खेतों मे वाछित दूरी पर प्रतिरोपित किया जा सकता है।

कलिकायन विधि से तैयार खेजड़ी का उत्पादन प्रबंधन : कलिकायन करने के पश्चात एक मजबतू पेड़ के रूप में विकसित करने के लिए शुरू से ही कटाई–छटंाई द्वारा सन्तुलित बढ़वार नियंत्रित करना अति आवष्यक होता है शुरूआत में कलिकायन किये हुए स्थान के नीचे मूलवृन्त से निकलने वाली अन्य शाखाओं को निकालना जरूरी होता है। कलिकायन के स्थान से एक मजबूत उर्ध्वगामी शाखा से 2–3 शाखाओं को सभी दिषा मे बढ़ने दें। पेबंन्दी पेड़ो की परम्परागत छगांई नवम्बर–दिसम्बर में की जा सकती है लेकिन ऐसा करने पर उनमें अगले साल लूंग तो मिलेगा लेकिन माच अप्रेल में फलू व सागंरी नहीं आएगें आर्थिक दृष्टि से लूगं व सांगरी दोनो मिलने पर खेजड़ी की बागवानी ज्यादा सार्थक होगी। खेजड़ी की प्रति वर्ष छंगाई नवम्बर–दिसम्बर की बजाय मई–जनू में करने से लूंग के साथ–साथ सागंरी भी ली जा सकती है मई–जनू में छंगाई करने के बाद जून–जुलाई पेड़ो पर पुनः नई फटन आ जाती एवं नवम्बर–दिसम्बर तक शाखाएँ पक जाती है जिससे उन पर मार्च व अपेल्र में कच्ची सागं री की फसल ले सकते है। छंगाई करने का यह समय कलिकायन किये गए पाधों से अधिक व्यवसायिक लाभ के साथ खेजड़ी की उपयोगिता मे चार चाँद लगा सकता हैं। क्योंकि इस तरह इनमें फलन तीसरे साल से ही शुरू हो जाता है जो कि निरन्तर बढ़ता जाता है।

आँवला

आँवला कम देख रेख एवं कम खर्चे में भी अच्छा उत्पादन दे जाता हैं। इसके फल विटामीन 'सी' व खनिज लवणों का भण्डार होते हैं। इसी कारण इनका औषधीय महत्त्व हैं। यह कई तरह की मिट्टी क्षारीय/लवणीय तथा जिनका पी.एच. ज्यादा हो उसमें भी पनप जाता हैं।

खाद व उर्वरक

शुष्क क्षेत्रों में आंवला में खाद एवं उर्वरकों पर कोई विशेष कार्य नहीं हुआ है फिर भी सामान्यतः निम्नलिखित मात्रा में खाद व उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।

पेड की आयु (वर्ष)	गोबर की खाद (किग्रा./पेड)	उर्वरक किग्रा./पेड		
		यूरिया	सुपर फॉस्फेट	म्यूरेट ऑफ पोटाष
1.	20–25	0.220	0.350	0.125
2.	20–25	0.440	0.700	0.250
3.	20–25	0.660	1.05	0.375
4.	20–25	0.880	1.40	0.375
5 व अधिक	20–25	1.100	1.75	0.375

गोबर की खाद व सुपर फॉस्फेट की पूरी मात्रा तथा म्यूरेट ऑफ पोटाष व यूरिया की आधी मात्रा मार्च–अप्रैल में डालें व शेष बची यूरिया तथा म्यूरेट ऑफ पोटाष की मात्रा अगस्त–सितम्बर में फल लगने के बाद देवें। बोरॉन तत्व की कमी से फलों की गुणवत्ता में कमी आ सकती है, अतः सितम्बर से अक्टूबर माह मे 0.6 प्रतिषत बोरेक्स का 2–3 छिडकाव 10–15 दिन के अन्तर पर करना चाहिए, इससे फलों का विकास अच्छा होता है तथा फलों का गिरना भी कम हो जाता है।

कटाई–छटाई

ऑवले में कटाई छॅटाई की कोई विशेष आवष्यकता नहीं पडती है। आरम्भिक वर्षों में 2–3 फीट की ऊँचाई तक एकल तना रखकर 4–5 मजबूत शाखाएं जो सभी दिषाओं में निकली हों, का चयन करके अन्य को हटा देना चाहिए। प्रतिवर्ष कुछ षाखाएं सूखती रहती हैं उन्हें मार्च अप्रैल में पत्तियां गिरने के पष्चात काट देना चाहिए।

कीट एवं व्याधियाँ

ऑवला की फसल में विभिन्न प्रकार के रोग एवं कीटों का प्रकोप हो सकता है, लेकिन शुष्क क्षेत्रों में कोई विशेष रोग एवं कीटों का प्रकोप नहीं देखा गया है इस तरह यहाँ पर ऑवला की खेती करने पर दवाईयों के छिडकाव पर खर्चा नहीं के बराबर आता है। मुख्य रूप से दीमक के आक्रमण का भय बना रहता है। जिसके नियंत्रण के लिए क्लोरपाइरफोस नामक दवा का 0.3 प्रतिशत घोल बनाकर पौधों के तने के चारों ओर की मिट्टी में समय–समय पर डालना चाहिए।

सिंचाईः

सिंचाई की बारम्बारता भूमि की किस्म तथा जलवायु पर निर्भर करती है। शुष्क क्षेत्रों में ज्यादातर बलुई मिट्टी पायी जाती है इसलिए थोडा थोडा पानी बार बार देना पडता है अगर वर्षा ठीक ठाक हो तो जुलाई से सितम्बर तक सिंचाई की आवष्यकता नहीं रहती है, लेकिन इसके बाद अक्टूबर–नवम्बर मे 15 दिन के अन्तर पर व मार्च से जून तक प्रति सप्ताह सिंचाई करनी हिए जबकि दिसम्बर– जनवरी मे सिंचाई रोक देनी चाहिए।

कीट–व्याधियाँः राजस्थान जैसे शुष्क प्रान्त में साधारणतया किसी गंभीर बीमारी या कीट का प्रकोप नहीं देख गया हैं।

करौन्दा

किस्म

पन्तकृषि विश्वविद्यालय द्वारा करौंन्दे की तीन किस्मे विकसित की गई हैं। पन्त मनोहर, पन्त सूदर्शन तथा पन्त सूवर्णा।काजरी मे भी विगत दस वषो से करौंन्दा के जीव द्रव्य एकत्र करने तथा उसमे से उन्नत किस्मो का चयन प्रक्रिया द्वारा विकास पर कार्य किया गया जिसके फलस्वरुप तीन उन्नत अधिक उपज वाली किस्मो का चयन किया गया हैं। सी.जेड.के.–2011, सी.जेड.के.–2022, व सी.जेड.के.–2031। इनमे दो किस्मे पहले प्रकार की हैं तथा तीसरी किस्म दूसरे प्रकार की हैं।

प्रवर्धन

करौंन्दा का प्रवर्धन बीज द्वारा आसानी से किया जा सकता हैं। अधिकतर इसमे फलन स्वपरागण द्वारा होने के कारण इसके बीजू पौधेा मे मातृ पौधे के अधिकतर गुण आ जाते हैं। प्रवर्धन के वानस्पतिक तरीके जैसे कलम,ऊतक सवर्धन तथा गूंटी द्वारा भी यह कार्य सम्भव हैं लेकिन बीज विधि ज्यादा आसान,अधिक सफल व कम खर्चीली होने के कारण व्यापारिक स्तर पर इसे इसी विधि द्वारा ही प्रवर्धित किया जाता है।

पौधो की रोपाई

करौंन्दा के लगभग एक वर्ष आयु के पोधौ को रापाई मे प्रयुक्त किया जाना चाहिए। जीवीत रक्षक बाड़ लगाने के लिए पौधो को 2 फिट की दुरी पर 1 घन फुट आकार के गड्ढो मे मिट्टी व अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद (1 : 3 अनुपात) को मिलाकर भरने के बाद लगाना चाहिए।

करौंन्दा का बगीचा लगाने के लिए 2 X2X2 फीट आकार के गड्ढो की 4–5 मीटर की दूरी पर खुदाई करे। पौधे लगाने का सर्वोत्तम समय जुलाई–अगस्त होता हैं। हालाकि सिचित क्षेत्रो मे पौधे मार्च माह मे भी लगाए जा सकते हैं।

खाद व उर्वरक

करौंन्दा मे देशी खाद ही पर्याप्त रहती हैं हालाकि बाड़ लगाते समय 100 ग्राम यूरिया प्रति पोधा देने से पोधे तेजी से बढते हैं और बाड़ जल्दी तैयार होती है। पुर्ण विकसित पोधो मे 10–15 किलो गोबर की खाद प्रतिवर्ष वर्षा ऋतु के समय देनी चाहिए।

कटाई छँटाई

बाड़ के रुप मे लगे पोधो को हेज की तरह आगे व पीछे की तरफ से काटते हैं जबकि पोधो की बीच मे कंटिग नही करते हैं ताकि इनकी शाखाए आपस मे मिलकर घनी बाड़ का रुप ले सके बगीचे के रुप मे लगे पोधो मे नीचे से निकलने वाली शाखाओं व सकर्स को समय– समय पर निकालते रहना चाहिए। साथ ही रोग ग्रस्त व सुखी टहनीयो को भी हटाते रहे ।

सिचाई

करौंन्दा के पोधे एक बार लगने के पश्चात असानी से नही जाते हैं लेकिन नियमित फल लेने के लिए सिचाई की आवश्यकता पड़ती हैं चूंकि इसमे मार्च– अप्रैल मे फूल आते है तथा गर्मीयो मे फल पेड़ो पर लगे होते है इसलिए गर्मीयो मे 10–12 दिन के अन्तराल पर लगभग 200 लीटर पानी प्रति पोधा देना चाहिए। वर्षा ऋतु मे सिचाई की आवश्यकता लगभग नही के बराबर रहती है। वर्षा का लम्बा अन्तराल होने पर सिचाई कर सकते है।

फलो की तुड़ाई व उपज

करौंन्दा मे फूल दो सीजन मार्च– अप्रैल तथा अक्टुम्बर– नवम्बर मे आते है मार्च– अप्रैल वाली सीजन मुख्य होती है जिसके फल अगस्त –सितम्बर मे तैयार होते है। फलो को पुरी तरह पकने से पहले तोड़ने से ही वे अचार, चटनी या अन्य उपयोग के लिए उपयुक्त रहते है। पूर्णतः पके फल बीज के लिए काम मे लेते है। औसत उपज लगभग 10–15 किलो प्रति झाड़ी होती हैं।

बागवानी फसलों में कुशल जल प्रबन्धन

रंजय कुमार सिंह

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान,जोधपुर

जल की समस्या हमारे देश के लिए ही नहीं, समूचे विश्व के लिए एक गंभीर समस्या है। किसी भी देश की कृषि की क्षमता निर्धारित करने में जल एक महती भूमिका का निर्वहन करता है। विश्व की आबादी में हमारी भागीदारी लगभग 17 प्रतिशत है, जबकि उपयोग में लाये जानेवाले जल की दृष्टि से हमारे देश में केवल 4प्रतिशत जल ही उपलब्ध है, जिसका 83 प्रतिशत उपयोग कृषि के लिए होता है। बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति एवं अधिक कृषि उत्पादन प्रपट करने हेतु भूमिगत जल का दोहन लगातार बढ़ता जा रहा है, जिसके कारण भूमिगत जलस्तर दिन–प्रतिदिन नीचे गिरता जा रहा है।

भारतीय गर्म शुष्क क्षेत्रों में मुख्यतः राजस्थान का पश्चिमी भाग (69%), उत्तर पश्चिमी गुजरात (21%) और हरियाणा और पंजाब का दक्षिण पश्चिमी भाग (10%) का हिस्सा आता है। राजस्थान राज्य की समग्र औसत वार्षिक वर्षा 531मिमी. है, जबकि राजस्थान के पश्चिमी भागों के लिए 318 मिमी. है। वाष्पोत्सर्जन प्रति वर्ष 1500 से 2000मिमी. के बीच होता है। मानसून की अवधि सामान्यतया 1जुलाई से 15सितंबर तक होती है। वर्षापात का भिन्नता गुणांक भी 60% से ज्यादा है। ऐसी स्थिति में वार्षिक फसलों की खेती, जब तक की सिंचाई की समुचित व्यवस्था न हो, जोखिम से भरा है और बागवानी उत्पादन ऐसे क्षेत्रों के लिए ज्यादा कारगर है। शुष्क क्षेत्र की फल आधारित फसलों में बेर, अनार, नीबू, आंवला, करोंदा इत्यादि महत्वपूर्ण हैं, जबकि सब्जियों में ककड़ी,तरबूज,लौकी,काचरी इत्यादि उगाए जाते हैं।

जल का कुशल प्रबन्धन

क्षेत्र स्तर पर उपलब्ध जल का कुशल प्रबन्धन बेहतर सिंचाई आवेदन दक्षता, जल उपयोग दक्षता में वृद्धि और संरक्षण की नई प्रौद्योगिकियों के माध्यम से किया जा सकता है। पानी के कुशल प्रबन्धन के अन्य साधनों में उपयुक्त कुशल सिंचाई पद्धति का चुनाव, खेतों में विभिन्न स्रोतों से पानी के संयुक्त उपयोग पर आधारित सिंचाई का इष्टतम निर्धारण, सस्य विज्ञान पद्धतियों में सुधार इत्यादि शामिल हैं। जल उपयोग के दूसरे क्षेत्रों में बढ़ती जरूरतों को देखते हुए आज कृषि कार्यों के लिए जल संसाधन की लगातार कमी हो रही है और और 'प्रति बूँद से अधिक फसल' आज की जरूरत बन गयी है। ऐसी परिस्थिति में जल प्रबन्धन की इष्टतम प्रौद्योगिकियों को अपनाने से ही हम जल उत्पादकता को बढ़ा सकते हैं।

सीमित सिंचाई जल का प्रबन्धन

शुष्क क्षेत्र में पानी सीमित है, इसलिए जल प्रबन्धन भूमि की प्रति इकाई उत्पादन के बदले पानी के प्रति यूनिट अधिकतम उपयोग करने के उद्देश्य से होना चाहिए। शुष्क क्षेत्र में बागवानी फसलों के उत्पादन को अधिकतम करने के लिए नियोजित प्रौद्योगिकियों में से कुछ नीचे सूचीबद्ध हैं:

छोटे गड्ढे (जलकुंड) द्वारा वर्षाजल संरक्षण

प्रत्येक खेतध्क्षेत्र में 3 मी.×1.5 मी.×1मी. का छोटा गड्ढा बनाया जा सकता है। इसमें संरक्षित पानी को पॉलिथीन शीट बिछाकर जलकुंड के पानी का रिसाव रोका जा सकता है। इस पानी को नवम्बर से जून–जुलाई तक (बरसात) शुरू होने से पहले पौधों को स्थापित करने के लिए प्रयोग कर सकते हैं। जलकुंड के पानी को वाष्पीकरण से बचाने हेतु पुआल अथवा आसपास उपलब्ध घास–फूस एवं बांस के उपयोग से सस्ता ढक्कन बनाकर रोका जा सकता है।

समतलीकरण

समतलीकरण कुशल जल प्रबन्धन की दिशा में एक सस्ता और सुलभ तरीका है। ऊबड़–खाबड़ भूमि में वर्षाजल का वितरण कहीं आवश्यकता से अधिक तो कहीं पर बहुत कम होता है। ये दोनों ही स्थितियाँ फसल उत्पादन के लिए प्रतिकूल है। खेत के समतलीकारण के द्वारा वर्षाजल वितरण की इस असमानता को दूर किया जा सकता है।

खेत में तालाब की तलछट का प्रयोग

बलुई मिट्टी में जल धारण करने की क्षमता बहुत कम होती है। इस कारण वर्षा का अधिकांश जल गहरे अन्तःश्राव के द्वारा बिना उपयोग के नीचे चला जाता है। वर्षाकाल के दौरान बहाव के साथ तालाबों में चिकनी काली मिट्टी जमा हो जाती है। इस मिट्टी की जल धारण क्षमता बलुई मिट्टी की अपेक्षा ज्यादा होती है। अतः गर्मियों में तालाबों के खाली होने के बाद इनकी सतही काली मिट्टी को खेतों में बिछा देने से खेतों में बलुई मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ायी जा सकती है व पानी अधिक समय तक फसलों के उपयोग के लिए भूमि में उपलब्ध रहेगा।

अर्द्धचंद्राकार संरचना

मामूली ढलानों पर अर्द्धचंद्र संरचनाओं का निर्माण करके वर्षाजल को एकत्र किया जाता है और मिट्टी कटाव को कम किया जाता है। ऐसी संरचनाएं हल्की मिट्टी जहां सतह पर परत बनती है, के लिए उपयुक्त हैं। ऐसी संरचनाओं में वर्षा जल एकत्रित होकर धीरे–धीरे मिट्टी के अंदर जाता है और मिट्टी की नमी को बरकरार रखता है।

मेड़बंदी

मेड़ का निर्माण वर्षाजलजनित मिट्टी अपवाहऔर नाली निर्माण से होने वाले नुकसान को कम करने के लिए किया जाता है। खेत के चारों ओर मेड़ न होने से वर्षाजल अनियंत्रित रूप से बहकर मृदा का अपरदन कर खेत में अवनलिकायँ (ळनससपमे) विकसित कर भूमि को खराब कर सकता है। अतः खेत के चारों ओर न्यूनतम 50 सेमी से 60 सेमी ऊंची मेड़ बनाकर वर्षाजल,पोषक तत्व, इत्यादि को बाहर जाने से रोका जा सकता है।

माइक्रो कैचमेंट(सूक्ष्म जलग्रहण)तकनीक

माइक्रो कैचमेंट प्रत्यक्ष जल संरक्षण प्रणालियों के प्रमुख रूपों में से एक है। माइक्रो कैचमेंट सिस्टम पेड़ों और झाड़ियों की बढ़ोतरी के लिए अपेक्षाकृत ज्यादा प्रभावी है। माइक्रो जलग्रहण आधारित फसल में वर्षा जल खेती क्षेत्र के एक छोटे से हिस्से में केंद्रित होता है। सूक्ष्म जलग्रहण रेतीली मिट्टी स्थितियों में पेड़ आधारित खेती के लिए एक बेहतर विकल्प है क्योंकि पेड़ की जड़ें गहरी होती हैं और इसलिए वे उपपरत में संग्रहित नमी का उपयोग कर सकते हैं। अनार, बेर और कई अन्य तरह के शुष्क बागवानी पौधे सफलतापूर्वक पानी के कम क्षेत्रों में उपयुक्त सूक्ष्म जलग्रहण के साथ उगाया जा सकता है (चित्र 1)। माइक्रो कैचमेंट तकनीक दाता और कलेक्टर क्षेत्र का अनुपात 1:1से लेकर 20: 1तक का हो सकता है। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर में बेर पौधे को लगाने एवं इसकी जल्द बढ़त के लिए माइक्रो कैचमेंट तकनीक का इस्तेमाल सफलतापूर्वक किया जा चुका है।

चित्र 1:बेर पौधे का माइक्रो कैचमेंट तकनीक के साथ विकास

सतही पलवार

शुष्क क्षेत्रों में उच्च तापमान के द्वारा तीव्र वाष्पीकरण होता है जिससे मृदा में व्याप्त नमी का तेजी से ह्रास होता है व पौधे नमी के अभाव में सूखने लगते हैं। अतः संचित नमी को बचाए रखने के लिए खेत से निकाले गए खरपतवार व अन्य घास–फूस से सतह पर की गयी पलवार मृदा के वातीय व जलीय क्षरण तथा मृदा नमी को बचाने में काफी सहायक होती है। सतही पलवार से भूमि के तापमान में कमी आती

है, फलस्वरूप जल वाष्पन कम हो जाता है। सतही पलवार के रूप में उपलब्धता के आधार पर फसलों के अवशिस्ट अंश,पत्तियाँ,सूखी घास, लकड़ी का बुरादा या पॉलिथीन की चादरें काम में ली जा सकती हैं। विभिन्न स्थानों पर किए गए विभिन्न अध्ययनों से साबित हुआ है की सतही पलवार का बेर, सेब, आंवला और चीकू जैसे फल फसलों में घास वृद्धि को कम करने के अलावा मिट्टी की नमी की स्थिति में सुधार हुआ और इन फलों की उपज मात्रा में भी वृद्धि हुई (चित्र 2)।

चित्र 2:पॉलिथीन सतही पलवार के साथ बेर पौधे का विकास

अल्प सिंचाई (डेफिसिट इरीगेशन)

अल्प सिंचाई में, लक्ष्य अधिकतम उपज प्राप्त करने के बजाय,अधिकतम फसल जल उत्पादकता प्राप्त करने के लिए है। एक फसल के इष्टतम पूर्ण आवश्यकता से कम सिंचाई करके, उपज 10% से कम हो सकता है, लेकिन पानी 50% तक बचाया जा सकता है। शुष्क भूमि में वर्षा आधारित फसलों के लिए पूरक सिंचाई के साथ, एक छोटी सिंचाई,वर्षा की कमी के दौरान और एक फसल के सूखे के प्रति संवेदनशील विकास चरणों के दौरान दिया जाता है।

व्यापक सिंचाई

व्यापक सिंचाई में एक बड़े क्षेत्र में पानी की कम मात्रा देने के उद्देश्य से है, न कि,एक छोटे से क्षेत्र पर पानी की एक बड़ी मात्रा डालने से। इससे प्रति इकाई भूमि उत्पादन में कमी आ सकती है, लेकिन प्रति इकाई पानी उत्पादन बढ़ जाता है।

जल भंडारण संरचनाएं

जल भंडारण संरचनाएं,शुष्क क्षेत्रों में वर्षा जल संचयन (एक्स–सीटू) के द्वारा पानी की उपलब्धता को बढ़ाने के लिए एक आशाजनक तकनीक है। इसका उपयोग क्षेत्र से दूर हुई बारिश को अपवाह द्वारा क्षेत्र में लाने बाद में उपयोग के लिए सतह भंडारण का संग्रह शामिल है। वर्षा जल संग्रहण का यह प्रकार फसल के मौसम के शुष्क अवधि के दौरान पूरक या रक्षात्मक सिंचाई प्रदान करता है।

जैविक विधियाँ

कृषि योग्य भूमि से भूमि एवं जल संरक्षण की शस्य वैज्ञानिक विधियाँ अपनाकर खेत से बहकर जानेवाली बहुमूल्य उपजाऊ मिट्टी व जल को खेत में ही संरक्षित करके अधिक पैदावार प्रपट की जा सकती है। इन विधियों को अपनाने के लिए अलग से धन की आवश्यकता नही होती है। ये विधियाँ ढलान की लंबाई को कम करके वर्षा के पानी के बहने की गति को धीमा करती है तथा वर्षा के पानी की बूँदों की प्रहारक क्षमता को कम करके पानी पौधों की पत्तियों, शाखाओं व तनों पर धारण कराकर उसे धीरे–धीरे सोखने में मदद करती है। ये विधियाँ 5 प्रतिशत वाली भूमि के लिए उपयोगी रहती है।

सूक्ष्म सिंचाई (माइक्रो इरीगेशन)

ड्रिप एवं स्प्रिंकलर, सिंचाई की अपेक्षाकृत नयी तकनीकें हैं जिसके द्वारा पानी की अच्छी–खासी बचत की जा सकती है।

ड्रिप (टपक) सिंचाई: इस तकनीक में छोटे छेद वाली प्लास्टिक की पाइप लाइनें इस्तेमाल की जाती हैं, जो पौधों की जड़ों के पास बूँद–बूँद कर पानी टपकाती है (चित्र 3)। इसमें सिंचाई के अलावा खाद और कीटनाशी दवा को भी आसानी से दिया जा सकता है। ड्रिप सिंचाई से जल की उपयोग दक्षता 85–90 प्रतिशत होती है। इस पद्धति के उपयोग से पारंपरिक सतही सिंचाई की तुलना में जल का औसतन 40 से 50 प्रतिशत बचत की जा सकती है, वहीं उत्पादन में 20 से 25 प्रतिशत तक की वृद्धि की जा सकती है। इस तकनीक को अपनाने से मिट्टी का कटाव भी नहीं होता और सिंचाई के लिए मेड़ नहीं बनानी पड़ती है। यह प्रणाली खर–पतवार नियंत्रण में भी सहयोग करता है। ड्रिप प्रणाली ऊबड़–खाबड़ एवं खारीय जमीन में भी उपयोगी है और इससे अगेती फसल की भी प्राप्ति होती है। फलदार पौधों के लिए बूँद–बूँद सिंचाई प्रणाली जल संरक्षण तथा जल उत्पादकता बढ़ाने के लिए अत्यंत कारगर साबित हुये हैं। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर में अनार में ड्रिप प्रणाली के इस्तेमाल से उसकी उपज और गुणवत्ता में सुधार हुआ है। इसकी अगली कड़ी में उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली है जो कि इष्टतम फसल के विकास के लिए एक अधिक स्थिर मिट्टी पानी और पोषक तत्व वातावरण प्रदान करते हैं।

चित्र 3:टपक सिंचाई

फव्वारा सिंचाई (स्प्रिंकलर इरीगेशन): फव्वारे से पानी छोटी–छोटी बूँदों में बारिश की फुहार की तरह पौधों के ऊपर गिरता है (चित्र 4)। फव्वारे के सिस्टम को पम्पिंग सेट से जोड़ देते हैं। जब पम्पिंग सेट को चलाया जाता है तो पानी तेज बहाव के साथ फुहार की तरह बाहर निकलता है। यह फव्वारा घूमता रहता है, जिससे आस–पास चारों तरफ फसल की सिंचाई होती रहती है। यह सघनखेती में अच्छा नतीजा देता है।

चित्र 4: फव्वारा सिंचाई

फुहार सिंचाई (मिस्ट इरीगेशन): इस तकनीक में पाइप से पानी की फुहार निकलती है। फुहारें 2 से 5 मीटर तक ऊँची उठ कर गिरती हैं। फुहार सिंचाई से आबोहवा के तापमान को भी कम किया जा सकता है, क्योंकि बारिश की तरह पानी गिरने से आस–पास ठंढक हो जाती है। यह तकनीक सब्जियों और बागवानी फसलों की नर्सरी के लिए पॉलीहाउस या शेडहाउस दोनों जगह अच्छी साबित हो रही है।

ड्रमकिट द्वारा टपक सिंचाईरू सिंचाई के इस तकनीक में 500–1000लीटर या इससे भी ज्यादा क्षमता वाले मजबूत प्लास्टिक के ड्रमों का इस्तेमाल किया जाता है। इन ड्रमों को 1–4 मीटर की ऊँचाई पर लोहे या सीमेंट के बने स्टैंड पर रख दिया जाता है। ड्रमों को पानी से भर लिया जाता है। इनसे पानी के लिए बनाए गए पाइप किट में गेट वाल्व व फिल्टर लगे रहते हैं, जिनसे एक लचीला व मजबूत प्लास्टिक पाइप लगा होता है। इस पाइप से एक उपमुख्य लैटरल पाइप निकलता है, जो बहुत पतला होता है।

पाइप को पंक्तिबद्ध लगी फसलों के साथ बिछाया जाता है। इसमें जहाँ–जहाँ पौधे जितनी दूरी पर लगे होते हैं, वहाँ–वहाँ इस लैटरल में छेड़ों के जरिए बूँद–बूँद पानी पौधे के पास टपकता रहता है। इसका इस्तेमाल मौसमी सब्जियों, फूलों व फलों की खेती में या सूखे इलाकों में किया जाता है। एक पर्याप्त स्तर पर दबाव उपलब्ध कराने के लिए खेत को यथासंभव समतल तैयार किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

सिंचाई की इन सभी तकनीकों का इस्तेमाल सब्जी, फूल, बागवानी और दूसरी नकदी फसलों में कर सकते हैं। लगातार बढ़ती आबादी, पानी का गलत तरीके से इस्तेमाल, बारिश का असमान वितरण आदि कारणों से पानी की बड़ी किल्लत हो गयी है। समय की माँग है कि जल को सही तरीके से ईस्टमाल में लाएँ और सिंचाई कि ऐसी तकनीकों को अपनायेँ, जो कम पानी से ज्यादा क्षेत्रफल में सिंचाई करे और पौधा बून–बूंद का उपयोग कर सके। शुष्क क्षेत्रों में, जहाँ वर्षा की कमी और अनियमितता है, जब तक वर्षाजल का उचित संरक्षण और कुशल प्रबंधन नहीं होगा, कृषि क्षेत्र में बड़ी सफलता की हम अपेक्षा नहीं रख सकते। 'प्रति ड्रॉप अधिक फसल' का उत्पादन करने के लिए तकनीकी समाधान मौजूद हैं, किन्तु, निवेश और राजनीतिक इच्छाशक्ति कि कमी से अक्सर वर्षा आधारित उत्पादन क्षेत्रों में इसका अपेक्षित परिणाम नहीं मिल पाया है।

काजरी द्वारा विकसित चारा उत्पादन संबंधी तकनीकियाँ

डॉ. एम. पाटीदार
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

शुष्क क्षेत्र में विपरीत जलवायु परिस्थितियों के कारण कृषि व्यवस्था से उत्पादन प्राप्त करना मुश्किल होता है।इन परिस्थतियों में पशुपालन एक आर्थिक स्थिरता प्रदान करने योग्य व्यवसाय उभरा हुआ है। राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में केवल 4 प्रतिशत भूमि ओरण–गोचर व चरागाह के लिए उपलब्ध होने के कारण पर्याप्त मात्रा में पशु चारा उपलब्ध नहीं होता है।अधिक पशुधन संख्या सीमित चरागाह भूमि पर लम्बे समय तक चरवाने से चारे का उत्पादन एवं गुणवत्ता कम हो जाती है।राजस्थान में 40 प्रतिशत भूमि जो परती, बंजर एवं कृषि योग्य नहीं है पशु चारे हेतु उपयोग में लाई जा सकती है। इस प्रकार के भू–क्षेत्र बढ़ने की संभावनाऐं ओर अधिक जताई जा रही हैं। इस तरह शुष्क क्षेत्र में न केवल कृषि उत्पादन कम होता है, परन्तु पशुओं के लिए आवश्यक चारे की आपूर्ति भी नहीं हो पाती।उन्नत चरागाह पद्धति अपनाकर कम उपजाऊ भूमि को उत्पादन के लिए उपयोग किया जा सकता है, जिससे पशुओं के लिए चारा व अन्य उपयोग हेतु काष्ठ लकड़ी एवं जलाऊ लकड़ी प्राप्त की जा सकती है। चरागाह विकास के लिए बहुवर्षीय घासें जैसे अंजन, धामण, सेवन, ग्रामना, मूरठ इत्यादि का चयन करना चाहिए,जो उच्च गुणवत्ता का चारा प्रदान करती है।केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर द्वारा विकसित तकनीकें अपनाकर घास लगाने से चरागाहों की गिरती दशा पर अंकुश लागाया जा सकता है व इनको अधिक उत्पादक बनाया जा सकता है।

भूमि चुनाव व खेत की तैयारी

घास प्रायः सभी तरह की भूमियों में उगाई जा सकती है परन्तु रेतीली–दोमट भूमि में इसकी बढ़वार अच्छी होती है। किसान प्रायः कम उपजाऊ भूमि में घास लगाते हैं। भूमि के चयन के बाद आवारा पशुओं व अन्य जीवों से चरागाह को बचाने के लिए चारों तरफ बाड़ लगाना आवश्यक है। काँटेदार तारों की बाड़ स्थाई होती है, परन्तु मंहगी होती है। इसके स्थान पर खाई और डोली की बाड़ बनाई जा सकती है। इसके लिए 1.25 मीटर चौड़ी व 1.00 मीटर गहरी खाई खोदी जाती है और खाई की मिट्टी से अन्दर की तरफ मेड़ बनाते हैं। उस पर काँटेदार झाड़ियाँ जैसे कुमट, कैर, बैर आदि व वृक्ष जैसे देशी बबूल, गोंदा, खेजड़ी आदि लगाये जा सकते हैं। इन झाड़ियों व पेंड़ों से सुरक्षा के साथ–साथ अन्य लाभ जैसे चारा, फल, लकड़ी, इत्यादि भी मिलते हैं। इस तरह से तैयार बाड़ का नियमित रुप से रख–रखाव जरुरी है। सार्वजनिक चरागाह में लोगों के सहयोग से लगाई गई बाड़ सफल रहती है। भूमि की तैयारी अन्य फसलों की तरह ही की जाती है। दो–तीन जुताई करके पाटा लगा देवें। खेत की तैयारी वर्षा ऋतु की पहली प्रभावी वर्षा होने से पहले करें। खेत से कम उपजाऊ झाड़ियाँ, बहुवर्षीय खरपतवार आदि निकाल देवें। उपयोगी झाड़ियों व पेड़ों का घेरा (क्रॉउन कवर) भी प्रक्षेत्र के क्षेत्रफल का 14 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। एक हैक्टर क्षेत्र में 30–35 पेड़ पर्याप्त रहते हैं।जहाँ चरागाह में वृक्ष लगाने है वहाँ पर अवांछित एवं अव्यवस्थित झाड़िया हटाकार भूमि को अच्छी तरह से समतल करके पौधे लगाने के लिए 45 ×45×45 सेमी आकार के गड्ढ़े आवश्यक दूरी पर जून के महीने में बना लेने चाहिए। पेड़ से पेड़ की दूरी 5× 5 मीटर, 5× 10 मीटर या 10×10 मीटर जमीन की उपलब्धता व वृक्ष की प्रजाति के अनुसार रखी जाती है।पौधे लगाने से पूर्व गड़ढों को तीन–चौथाई तक 3:1 के अनुपात मे मिट्टी तथा गोबर की खाद के मिश्रण से भर देना चाहिए। जुलाई माह मे जैसे ही वर्षा शुरू हो, नर्सरी में तैयार किये हुऐ पौधो का रोपण कर देना चाहिए। पौधों को दीमक के प्रकोप से बचाने के लिए प्रति गड्ढ़ा 50 ग्राम मिथाइल पेराथियान कीटनाशी को मिट्टी की ऊपरी सतह पर अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।

बुआई का समय व विधि

पेड़ एवं झाड़ियाँ लगाने के बाद उन्नत तकनिकी से बहुवर्षीय घासों तथा दलहनी चारा फसलों को पेड़ों के बीच रिक्त जमीन पर उगायें। घासों को 50–75 सेमी की दूरी रखते हुए पंक्तियों में बुआई करें।बहुवर्षीय घासे जैसे अंजन घास 5–6 कि॰ ग्रा॰, मोडा धामन 5–6 कि॰ ग्रा॰, सेवण 6–7 कि॰ ग्रा॰ तथा ग्रामना 2–2.5 कि॰ ग्रा॰ बीज प्रति हेक्टर जमीन के लिऐ पर्याप्त होते है। बुआई करते समय ध्यान रहे कि बीज के ऊपर मिट्टी की परत कम से कम आए अन्यथा अंकुरण पर विपरित प्रभाव पडता है क्योंकि घास के बीजों के दाने बहुत ही छोटे होते हैं। बीजों को खेत की नम मिट्टी के साथ (1:5 आयतन से) मिलाकर बुवाई करें।

बहुवर्षीय घासों को पुरानी जड़ो द्वारा भी लगाया जा सकता है परन्तु इसमे श्रम ज्यादा लगती है। इसके अलावा गोलियाँ बनाकर (जिसमें बीज, चिकनी मिट्टी, गोबर की खाद एवं रेत का अनुपात 1:35:2.5:2.5 में हो घास की बुआई की जा सकती है। चरागाह से अधिक गुणवत्ता वाला चारा प्राप्त करने के लिए घासों के साथ–साथ दलहनी फसलें जैसे सेम, तितली मटर, स्टाइलो ग्वार, चंवला, मोठ आदि को समानान्तर 4–4 मीटर की पट्टियों मे बुआई करें।दलहनी फसलों का 15–20 कि॰ ग्रा॰ बीज एक हैक्टर के लिए पर्याप्त रहता है। दलहनी फसलों के वन चरागाह मे लगाने से भूमि की उर्वरकता मे सुधार होता है तथा प्रोटीन की मात्रा भी बढ़ जाती है।घास की बुआई जुलाई से अगस्त के प्रथम सप्ताह तक की जा सकती है। जहाँ सिंचाई की सुविधा है वहाँ फरवरी–मार्च में भी बुआई की जा सकती है। वर्षा ऋतु में, वर्षा होने पर ही बुआई करें। मध्य जुलाई बुआई का समय सर्वोत्तमहै। यद्यपि तैयार खेत में सूखे में ही बुआई की जा सकती है, परन्तु वर्षा देर से होने पर चींटियाँ, आँधी, इत्यादि बीज को नुकसान पहुँचा सकती हैं। चरागाह को बीज द्वारा, पौध द्वारा, जड़ों द्वारा व बीजों की गोलियाँ बनाकर लगाया जा सकता है। बीजों को छिटकर यापंक्तियों में बोया जा सकता है। पंक्तियों में विभिन्न शस्य क्रियाओं को करने में आसानी रहती है चरागाह की उत्पादकता बढ़ती है एवं चरागाह की आयु बढ़ती है। शुष्क क्षेत्र में 75 सेमी पंक्ति से पंक्ति की दूरी उचित पाई गई। प्रयोग में जब समान बीज दर से 50 सेमी व 75 सेमी पंक्ति से पंक्ति की दूरियों का चारा उत्पादन पर प्रभाव का अध्ययन किया गया तो पाया कि चारा उत्पादन में अंतर नहीं है। 75 सेमी दूरी रखने पर, 50 सेमी की अपेक्षा समय व श्रम की बचत होती है।

खाद व उर्वरक

शुष्क क्षेत्र में कम वर्षा एवं भूमि में नमी की कमी होने के कारण साधारणतया उर्वरकों का प्रयोग कम किया जाता है। परन्तु कमजोर भूमियों से अधिक व उच्च गुणवत्ता का चारा प्राप्त करने के लिए आवश्यकतानुसार खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग किया जाना चाहिए। घास का चरागाह लगाने के लिए 5 टन प्रति हैक्टर अच्छी सड़ी गोबर की खाद या अन्य कार्बनिक खाद को बुआई से पहले खेत में अच्छी तरह मिलाने से चरागाह की स्थापना अच्छी होती है। इससे हल्की मृदाओं में जल–धारण क्षमता बढ़ती है तथा बीजों का अंकुरण अच्छा होता है और चारा उत्पादन बढ़ जाता है। इसके अलावा 40 किग्रा. नत्रजन एवं 20 किग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टर प्रति वर्ष प्रयोग किए जाते हैं।

खरपतवार निकालना

खरपतवार घास के साथ नमी एवं पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्घा करते हैं इसलिए चरागाह से खरपतवार निकालना उसकी उत्पादकता एवं गुणवत्ता बढ़ाने के लिए आवश्यक है। प्रथम बार कल्ले बनते समय(बुआई के 15–20 दिन बाद) व द्वितीय बार फूल आने पर (बुआई के 30–35 दिन बाद) खरपतवार निकालें। पंक्तियों में बोए गए चरागाह में ट्रेक्टर चालित कल्टीवेटर से अंतरशस्य क्रियाएं करें। इससे जमीन में वायुसंचार बढ़ता है, पानी का संरक्षण होता है जिससे जड़ों का पर्याप्त विकास होता है व पौधों की बढ़वार अधिक होती है।

वन चरागाह पद्धति

वन चरागाह पद्धति में पेड़ एवं झाड़ियों को खेत में एवं चरागाह के चारों तरफ लगाकर बाड़ के रूप मे भी उपयोग किया जा सकता है। मेड़ बन्दी के साथ–साथ नागफनी, थोर और इजराइली बबूल लगा सकते हैं। अगर नीम के लिए उपयुक्त जमीन है तो चरागाह के चारों तरफ लगा सकते हैं। इससे चरागाह की सुरक्षा के साथ–साथ इनकी पत्तियों को पशुओं के लिए चारे के रूप मे प्रयोग किया जा सकता है। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर में वर्ष 2003 से 2011 तक वन चरागाह पद्धति के लिए किये गये प्रयोग में अजंन/सेम को *हार्डविकिया बाइनेटा* व मोपेन के पेड़ों की बीच पट्टियों में उगाया गया। प्रयोग के परिणाम दर्शाते हैं कि प्रारम्भिक अवस्था मे पेड़ों की वृद्धि धीमी होने से धास की उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ा। सेवण तथा अंजन घास को अकेले पड़ों के बीच पट्टी में बोने से शुष्क पदार्थो की अधिक उपज प्राप्त हुई और दलहनी फसल चवला अथवा सेम के साथ समानान्तर पट्टिओं में बोने से कम वर्षा वाले वर्षो में चारे की उपज मे थोड़ी कमी जरूर हुई परन्तु चारे की गुणवत्ता (क्रूड प्रोटीन की उपज) मे बढ़ोतरी हुई। इस पद्धति मे 40 कि॰ ग्रा॰ नत्रजन प्रति हैक्टर डालने से 15 प्रतिशत की उपज मे वृद्धि हुई। इसके अलावा पाँचवे वर्ष के उपरान्त पड़ों से पत्तियाँ एव जलाऊ लकड़ी प्राप्त होने लगी। प्रतिवर्ष 15–20 क्विंटल सूखे चारे के अलावा लगभग 1–2 क्विंटल सूखी पत्तियाँ एवं 2–3 क्विंटल जलाऊ लकड़ी प्राप्त होती है।

चरागाह का रख रखाव

थार मरुस्थल के शुष्क क्षेत्र में अन्य मरुस्थलों की तुलना में पशुघनत्व अधिक होने के करण आवारा पशुओं से चरागाह को नुकसान की संभावना बनी रहती है, जिससे बचाव जरुरी है। अत्यधिक चराई से चरागाह की उम्र कम हो जातीहै व वार्षिक खरपतवार आ जाते हैं अतः वहन क्षमता के अनुसार वैज्ञानिक विधि से चराई करावें। चरागाह से अनावश्यक बहुवर्षीय झाड़ियाँ व पेड़ न आने दें। जानवरों को छाया हेतु 30–35 पेड़ प्रति हैक्टर पर्याप्त रहते हैं। ये पेड़ छाया के साथ–साथ चारा प्रदान भी करेगें। पीने के पानी का समुचित प्रबंध करें। खरपतवार निकालते रहें व ट्रेक्टर चलित कल्टीवेटर से पंक्तियों में अन्तरशस्य क्रियाएं करें। इससे भूमि की जलवहन क्षमता व वायु संचार बढ़ता है व जड़ों का विकास अधिक होने के कारण पौधों की बढ़वार अधिक होती है। अगर पानी की सुविधा है व बूजे मर रहें हैं तो हल्की सिचांई करें। दीमक से बचाव हेतु क्यूनॉलफॉस1.5चूर्ण 25 किग्रा. प्रति हैक्टयर की दर से भूमि में मिलाऐं या अन्य कार्बनिक कीटनाशक जैसे नीम की निंबोली पाउडर का प्रयोग भी कर सकते हैं। चराई के बाद कुछ तने बचें तो काट देवें। इस तरह से रखरखाव से चरागाह की उत्पादन क्षमता 4–5 वर्ष तक बनी रहती है। चरागाह का कुछ हिस्सा (1/10) भाग बीज उत्पादन के लिए भी रखा जा सकता है।

चरागाह उपयोग

चरागाह का उपयोग इस प्रकार करना चाहिए कि चरागाह की उत्पादकता लम्बे समय तक बनी रहे। वृक्षों एवं झाड़ियों की आवश्यकतानुसार कटाई–छंटाई करें। घास लगने के प्रथम वर्ष पशुओं से चराई नहीं करावें और जहाँ पर पशुओं द्वारा चराई नहीं करानी हो तो घास को 50 प्रतिशत फूल आने की अवस्था मे काटकर पशुओं को हरी घास खिला सकते हैं अथवा सूखा कर 'हे' बनाकर जब हरी घास उपलब्ध नहीं हो पशुओं को खिलाया जा सकता है। अधिक चराई होने से बोई गई घासें जल्दी खत्म हो जाती हैं और इनकी जगह ऐसे खरपतवार तैयार हो जाते हैं जिनकी पशु नहीं खाते। घास की चराई या कटाई हर साल करायें। इससे घास अच्छी फूटती है और घास का उत्पादन बढ़ता है।

अधिक चारा प्राप्त करने एवं चरागाह को पूर्ण विकसित रखने के लिए चक्रवात चराई करानी चाहिए। लगातार चराई पद्धति में पशुओं को चराने से चरागाह के किसी भी भाग को विश्राम नहीं मिलता तथा घास को वृद्धि का समय नहीं मिलता है इससे चरागाह जल्दी समाप्त हो जाते हैं परिवर्तित चराई पद्धति में चरागाह को चार बराबर भागों में बाँट देते हैं। पहले एक भाग में पशुओं को चराते है तथा इस भाग में चारे की उपलब्धता कम होने पर अगले भाग मे पशुओं को चराई के लिए प्रवेश देना चाहिए। इस तरह चारों भागों की पूर्ण चराई करनी चाहिए, जिससे प्रत्येक भाग को विश्राम मिल जाता है और घास की वृद्धि के लिए समय भी मिल जाता है। चरागाह के कुछ हिस्से को बीज उत्पादन के लिए रखना चाहिए। वन चरागाह पद्धति में जब उन्नत घास, जैसे अंजन या सेवण घास को दलहनी फसल के साथ मिश्रित करके बुआई करते हैं तो प्रति हेक्टर 3–4 गायें या 10–12 भेड़ों या बकरियों के लिए पर्याप्त चारा मिलता है। शुष्क क्षेत्र में सर्दी तथा गर्मी की ऋतु में जब हरा चारा उपलब्ध नहीं होता है तब चरागाह में लगे वृक्षों की कटाई–छंगाई करके प्राप्त पत्तियों को हरे चारे के रूप मे उपयोग किया जा सकता है। इन वृक्षों की मुलायम टहनियों, फल, एवं फली को भी चारे के रूप मे प्रयोग लिया जा सकता है।

चरागाह लागत

प्रथम वर्ष लागत ज्यादा आती है जो 5000 से 6000 रू. तक हो सकती है। बाद में लागत कम हो जाती है व लाभ बढ़ जाता है। द्वितीय वर्ष अगर 2000 किग्रा. सूखा चारा प्राप्त होता है तो भी लगभग 4000 से 5000 रू. प्रति हैक्टर लाभ प्राप्त होता है। घास के चरागाह से अप्रत्यक्ष लाभ जैसे पर्यावरण सुधार, अच्छी भूमि का उपयोग अन्य फसलों के काम में लेना, डेयरी उद्योग का विकास, जैव विविधता का बचाव, ऊर्जा का बचाव, रोजगार उपलब्ध कराना आदि भी बहुत ज्यादा होते हैं जिनका मूल्य बहुत ज्यादा होता है।

उपसंहार

इस प्रकार पश्चिमी राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में घास के चरागाहों से अधिक उत्पादन लेकर बार–बार होने वाली चारे की कमी को पूरा किया जा सकता है। ग्रामीण बेरोजगारों को वर्षपर्यन्त रोजगार मिलता है, दुग्ध उद्योग का विकास होता है व भूमि सुधार भी होता है। अन्ततोगत्वा किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार होता है।

डेयरी प्रबंधन एवं दुग्ध उत्पाद निर्माण

बी. के. माथुर,सुभाष कच्छवाह, ए. के. मिश्रा, तेजकरण पटीदार एवं मुकेश बैरवा
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

पशुधन मरूक्षेत्र की ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य स्तम्भ है। पारम्परिक ज्ञान एवं अनुभव के अनुसार यहां पर पशुपालन आधारित कृषि कार्य को ही महत्व दिया जाता है। मरूक्षेत्र में मुख्यतः वर्षा आधारित कृषि होती है। यहां वर्षा कम एवं अनियमित होने के कारण खेती से कम लाभ प्राप्त होता है। शुष्क क्षेत्रों में अकाल एवं सूखे की स्थिति में केवल फसल पर निर्भर नहीं रहा जा सकता है। इन परिस्थितियों में पशुधन ही किसानो के जीविकोपार्जन का मुख्य स्त्रोत है, इसीलिए पशुधन एवं उनके उत्पाद जेसे ऊन, दूध, खाल आदि ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधारभूत स्तम्भ हैं।

कम बरसात, अकाल, सूखा के कारण फसलों तथा चारागाह क्षेत्रों पर बुरा असर पड़ रहा है। परिणाम स्वरूप चारे के उत्पादन के साथ–साथ गुणवत्ता में भी कमी रही है । अकाल एवं सूखे की स्थिति में पशुधन के अच्छे स्वास्थ्य एवं अधिक दुग्ध उत्पादन के लिए गोचर एवं बंजर भूमि पर बहुवर्षीय घासें लगाई जानी चाहिए तथा बहुउपयोगी पेड़–पौधों को इन क्षेत्रों में बढावा दिया जाना चाहिए। वृहद स्तर पर सामुदायिक चारागाह एवं ओरण भूमि को बढाने की आवश्यकता है। पशुओं के प्रबधंन में भी कुछ आवश्यक परिवर्तन कर बढते तापमान के प्रभाव से निपटा जा सकता है। पशुओं को सुबह एवं शाम ठंडक के समय चारा खिलाया जाना चाहिए। चारागाहों एवं गोचर क्षेत्रो में घास एवं फलियों की पोषकता एवं ताकत को बनाये रखने एवं पशुओं के चारे की जरूरत को पूरा करने के लिए समयबद्ध चराई पद्वति होनी चाहिए।

उन्नत चारागाह

राजस्थान राज्य का एक बड़ा हिस्सा मरूक्षेत्र है, जो कि अपने देश के अन्य हिस्सों से एकदम भिन्न है। यहाँ के किसानों की आजीविका में पशुधन का अहम योगदान है। यहाँ पर पाये जाने वाले पशुधन में गाय, बकरी, भेड़ व ऊँट उत्तम नस्ल के हैं। इनमें मरूस्थलीय विपरीत परिस्थितियों को सहन कर, उत्पादन बनाये रखने की असीम क्षमता है। इन पशुओं का प्रबंधन देश के अन्य जलवायु वाले पशुधन से अलग है। इन पशुओं से अधिक से अधिक उत्पादन लेना इनके उचित प्रबंधन पर निर्भर करता है। यहाँ पर पशुओं के लिए पानी, बाँटा (दाना) व चारे की भारी कमी रहती है। अतः पशुपालकों को अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए इन पशुओं का वैज्ञानिक आधार पर प्रबंधन करना होगा।

पशु नस्ल

थार के रेगिस्तान में जहॉ एक ओर अधिक तापमान, सूखा, अकाल आम है वहीं दूसरी तरफ प्रकृति ने शुष्क क्षेत्रों में पशुधन की विशिष्ट प्रजातियों के पशु प्रदान किये हैं।

प्रकृति की विपरीत परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता रखने वाली यहाँ की प्रमुख पशु नस्लें निम्न हैं:

गायः– थारपारकर, राठी, काकरेज व नागौरी
भेड़ः– चोकला, नाली, मारवाड़ी, पुगल, सोनाडी व जैसलमेरी
बकरीः– मारवाड़ी व सिरोही
ऊँटः– बीकानेरी व जैसलमेरी

पश, पोषण

पशु उत्पादन की लागत में पशु आहार की भूमिका अति महत्वपूर्ण होती है। क्योंकि कुल लागत का लगभग 70 प्रतिशत हिस्सा पशु आहार पर ही खर्च होता है। पशुओं से उचित मात्रा में उत्पादन उनके संतुलित पोषण पर निर्भर करता है। अतः पशुपालकों को पशु आहार पर खर्चे के साथ–साथ अनुकूल संतुलित पोषण का भी ध्यान रखना चाहिए। मरूक्षेत्र में वर्ष के अधिकतर महीनों में हरे चारे का अभाव रहता है, इस दौरान मवेशी का पेट भरने के लिए मुख्य आहार रेशेदार सूखी बाजरा कुत्तर, खाखला इत्यादि का ही होता है। जिससे पशु में प्रोटीन, लवण व विटामिनों की कमी हो जाती है। अतः इन कमियों को पूरा करने के लिए पशुपालकों को पशुओं के आहार प्रबंधन की निम्नलिखित जरूरी बातों का ध्यान रखना होगा

- **मरूक्षेत्र के अपारम्परिक आहार स्रोतः**–मरूक्षेत्र में अपारम्परिक आहार बहुतायत में उपलब्ध है जैसे तुम्बे की खल, अंग्रेजी बबूल फली चूरा, रायड़े की खल आदि। इनको 20 से 30 प्रतिशत मात्रा में बॉटे (दाने) में मिलाकर खिलायें। इससे उत्पादन लागत में 20 से 25 प्रतिशत तक कमी की जा सकती है व पशु स्वस्थ रहता है।

- **भूसे का यूरिया उपचारः**–भूसे को यूरिया से उपचारित कर पौष्टिक बनाने के लिए एक सौ किलो सूखी बाजरा कुत्तर, खाखला या चावल भूसा (पुआल) को 4 किलो यूरिया व 50 लीटर पानी से उपचारित करते है। यूरिया उपचार से चारे की पौष्टिकता एवम् पाचकता बढ़ जाती है। इसमें प्रोटीन की मात्रा बढ़कर 7–8 प्रतिशत तक हो जाती है, जो पशु को प्रोटीन के कुपोषण से बचाती है।

1. **पशु आहार बट्टिका का प्रयोगः**–काजरी द्वारा विकसित या बाजार में उपलब्ध राजस्थान कोओपरेटिव डेयरी फेडरेषन (आर.सी.डी.एफ.) पशु आहार बट्टिका पूरक पौष्टिक आहार के रूप में मवेशियों में आवश्यक तत्व तथा प्रोटीन की कमी दूर करती है। दो किलो वजन की एक बट्टिका पशु के लगभग एक सप्ताह तक चाटने के काम आती है।
2. **अपारम्परिक साइलेजः**–मरूक्षेत्र में उपलब्ध सूखा चारा जैसे भूसा, कडबी, सूखी पत्तियाँ, बचे हुए पदार्थ इत्यादि से 'साइलेज' बनाने को गैर–पारम्परिक साइलेज विधि द्वारा सूखे चारे का पौष्टिकीकरण कहते हैं। यह साइलेज संस्थान में दुधारू थारपारकर गायों को समय–समय पर खिलाया गया है, जिसे गायों ने बड़े चाव से खाया है व दुग्ध उत्पादन में भी बढ़ोतरी पायी गयी। काजरी द्वारा विकसित यह तकनीक सरल एवम् सस्ती है। सूखे चारे की जैविक प्रक्रिया से यह साइलेज बनाया जाता है।

इस प्रक्रिया में सूखे चारे में नमी की कमी को रातभर पानी ($2^1/_2$गुणा पानी) में भिगोकर पूरा किया जाता है व यूरिया (2 प्रतिशत) और मोलासीस (शीरा) या पशुओं को खिलाने वाला गुड़ (10 प्रतिशत) जैसे पदार्थों से चारे में प्रोटीन और ऊर्जा की मात्रा बढ़ाई जाती है तथा खट्टी छाछ (10 प्रतिशत) के उपयोग से जरूरी बैक्टीरिया प्राप्त होते हैं।

संतुलित आहार से अधिक दुग्ध उतपादन

पशु स्वास्थ्य प्रबंधन

संक्रामक बीमारियों से बचाव हेतु टीकाकरण–एक स्वस्थ पशु ही अधिकतम उत्पादन कर सकता है। अतः पशुपालकों को बीमारियों की चिकित्सा पर अधिक खर्च करने की अपेक्षा ''चिकित्सा से अच्छा बचाव'' कहावत का पालन करना चाहिए। सूखाकाल में कुपोषण से पीड़ित पशुओं में होने वाली बीमारियों से बचाव के लिए निम्नलिखित सारणी अनुसार समय–समय पर टीका लगवायें।

पशुओं में होने वाली विभिन्न प्रकार की संक्रामक बीमारियों से बचाव हेतु पशुओं का समय पर टीकाकरण कराना बहुत आवश्यक है अन्यथा इनका ईलाज असंभव या बहुत मंहगा होता है। जिससे पशुधन को बहुत नुकसान होता है ।

सारणी 1 :गाय तथा भैंस में टीकाकरण

क्र. सं.	बीमारी का नाम	टीका का नाम	टीके की खुराक व मौसम	अन्तराल
1.	खुराड़िया–मुराड़िया (एफ. एम.डी.)	ऑयल एडजूवेंट टीका (एफ.एम.डी., एच.एस., बी.क्यू.)	3 मि.ली., माँसपेषियों में, सर्दी या बरसात से पूर्व	वर्ष में एक बार, प्रथम टीका– 4 महीने की आयु पर
2.	गलघोंटू (एच.एस.)			
3.	लंगड़िया बुखार (बी.क्यू.)			
4.	एन्थ्रेक्स	एन्थ्रेक्स स्पोर टीका	1 एम.एल., त्वचा के नीचेफरवरी–मई	प्रतिवर्ष, प्रथम टीका– 6 महीने की आयु पर
5.	ब्रूसेलोसिस	ब्रूसेला एबोर्टस (स्ट्रेन–19) टीका	5 मि.ली., त्वचा के नीचे वर्ष में कभी भी	4 से 8 महीने की आयु पर केवल एक बार, मादाओं में

पशुओं में कुपोषण सम्बन्धी बीमारियां

पशुओं में होने वाली अधिकांश बीमारियां असन्तुलित अहार एवं कुपोषण के कारण होती है । इनका मुख्य कारण प्रोटीन कैल्शियम, फॉसफोरस, विटामिन –ए एवं कुछ विशेष लवणों की कमी है । जिससे पशु की बढ़वार रूक जाती है, पशु दिनों–दिन कमजोर होने लगता है और उसकी हड्डियां मुख्य तौर पर पसलियॉ दिखाई देने लगती है । पशु की थुम्बी कम होने लगती है। पशु अभोज्य पदार्थ जैसे जूता–चप्पल, मिट्टी, मल कपड़ा, पौलिथीन थैलियां आदि खाने लगता है तथा दॉत किटकिटाने लगता है। पशु का हाजमा प्रायः खराब होने लगता है जिससे कब्जी, आफरा या दस्त लग जाते है। पशु के पेट में दर्द रहता है जिसके कारण वह बैचेन रहता है व पैर पटकता है। इसके अलावा पशु की त्वचा सूखने लगती है व बाल/ऊन झड़ने लगते है। उत्पादक क्षमता लगातार कम होने लगती है व दूध जल्द सूख जाता है। पशु की प्रजनन क्षमता कम हो जाती है तथा पशु लम्बे समय तक गर्मी में नहीं आता। पशु में गर्भ नहीं ठहरता, उत्तेला (फिराव) खाने लगता है, बच्चा अधूरा गिरा देता है । जर अटक जाती है। ब्याने से पहले अथवा बाद में आर (योनि एवं गर्भाशय) शरीर से बाहर आने लगती है। जिसमें संक्रमण होने पर पशु की मृत्यु तक हो जाती है। पशु की ऑखों में पानी आता है, शाम एवं रात को दिखना कम हो सकता है। ऑखों पर सफेद फूला भी आ सकता है ।

उपरोक्त समस्या के समाधान हेतु पशुओ को सूखे चारे को यूरिया उपचारित कर खिलायें जिससे पशु को प्रोटिन एवं शर्करा (ऊर्जा) उपलब्ध हो सके । अकाल में विशेष तौर पर सभी पशुओं को लवण, विटामिन्स मिश्रण जो कि बाजार में विभिन्न नामों से उपलब्ध है निम्न मात्रा में खिलाना चाहिए।

दुधारू गाय/भैंस – 25 से 30 ग्राम, बाखड़ी गाय /भैंस – 10 से 15 ग्राम, प्रति बछ़डी /पाडी – 10 से 15 ग्राम, भेड़ / बकरी – 3 से 5 ग्राम प्रति दिन दाने के साथ खिलाना चाहिए । यह लवण मिश्रण अनुपचारित/उपचारित चारे या बॉटे में या किसी अन्य भोज्य पदार्थ में मिलाकर पशु को प्रति दिन खिलाये। रतोंधी/ऑख पर फूला या चमड़ी सूखी होने पर पशु को प्रत्येक 2–3 माह बाद विटामिन ए का इन्जेक्शन लगवाना चाहिये। शरीर में उर्जा की आवश्यकता पूरी करने हेतु समय–समय पर पशु को रसकट गुड़ या शीरा (मोलासीस) खिलाते रहना चाहिए ।

पशुओं में बांझपन– अकाल के समय पशुओं में प्रोटीन, उर्जा लवण, विशेषतौर पर फास्फोरस एवं विटामिन–ए की कमी के कारण प्रजनन क्षमता में कमी आ जाती है। जिसके कारण पशु गर्मी में नहीं आता, फिराव खाता है बच्चा गिर जाता है, जर अटक जाती है या फिर बच्चेदानी बाहर निकलने लगती है। अकाल में बांझपन समस्या को दूर करने के लिए पशु को आन्तरिक एवं बाहरी परजीवी से मुक्त करने हेतु दवा देना चाहिए। पशु को प्रतिदिन 1 किलों अतिरिक्त संतुलित पशु आहार दें। पशु को प्रतिदिन एक बार 25–30 ग्राम (एक मुट्ठी) लवण मिश्रण खिलायें । पशु को उर्जा देने हेतु गुड़ या शीरा चारें या बांटे में मिलाकर समय–समय पर खिलाते रहें । विटामिन–ए के इंजेक्शन या घोल 2–3 दिन तक दें। फास्फोरस के इंजेक्शन 2 से 3 दिन तक दें।

बकरी के दूध से बनी कुल्फी

दूध का मूल्य सम्वर्धनः गाय वबकरी के दूध से कुल्फी पनीर एवं अन्य खाद्य उत्पाद बनाकर अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है। बकरी के दूध से बने उत्पादों जैसे कि कुल्फी, पनीर, सुगंधित छाछ पेय, तथा मांस जैसे नगेट व सौसेज के मूल्य संवर्धन के लिए तकनीकें विकसित की गई हैं। कुल्फी एक स्वादिष्टता के रूप में स्वीकार की गई है जिसका लागत लाभ अनुपात 1:2 है, जबकि पनीर भी उपभोक्ताओं की वरीयता है। लेक्टोपरऑक्सीडेज एंजाइम जो इन उत्पादों की आयु को बढ़ाता है, बकरी के दूध में गाय के दूध की तुलना में अधिक है।

मशरूम उत्पादन कैसे करें : आवश्यक जानकारी

सविता सिंघल, पूनम कलश, एस. के. शर्मा एवं सोमा श्रीवास्तव
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

परिचय

मशरूम (खुम्बी) वर्षा ऋतु में जंगलों, चारागाहों तथा खेतों में काफी मात्रा में उगती है। ग्रामीण क्षेत्र में लोग इन्हें एकत्रित करके स्वयं खाते है अथवा बेच देते है। खुम्बी (मशरूम) की कई जहरीली किस्में भी होती है जिनकी सही पहचान न होने पर वे जानलेवा हो सकती है। इनमें से खाने वाली कुछ किस्मों की खुम्बियों को आसानी से अपने घर पर उगाया जा ंसकता है जिनमें मुख्य हैं।श्वेत (सफेद) बटन खुम्बी और ढींगरी खुम्बी।

भारत एक कृषि प्रधान देश होने की वजह से यहां कृषि फसलों से प्राप्त होने वाले अवशेष,जैसे भूसा, पुआल, मोटे अनाजों से प्राप्त कड़वी, गन्ना, चना, मूंग की फलकटी, ग्वार की फलकटी, घास आदि के तने व पत्तियां पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है जिनका उपयोग प्रायः पशुओं के चारे के रूप में किया जाता है। ऐसे पादप पदार्थो को खुम्बी उत्पादन के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

भारत के विभिन्न भागों में भिन्न–भिन्न जलवायु पायी जाती है। जिस कारण हमारे देश में भिन्न–भिन्न प्रकार की खुम्बियों की खेती की जा सकती है। ढींगरी किस्म की खुम्बी मरू क्षेत्र में शरद ऋतु में उगायी जा सकती है। पौष्टिकता की दृष्टि में ढींगरी में विटामिन व खनिज लवण की पर्याप्त मात्रा होती है अतः यह हृदय रोग, मधुमेह व मोटापे से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए उपयुक्त भोजन है।

ढींगरी की खेती का प्रचलन दक्षिणी व पूर्वी भारत में अधिक है। देश के अन्य भागों में इसकी खेती छोटे स्तर पर की जा रही है। इस खुम्बी की खेती करने की विधि सरल व कम खर्चीली होने के कारण ग्रामीण क्षेत्र के भूमिहीन व सीमान्त किसानों तथा गरीब लोगों के लिए आय का एक उत्तम साधन है।

ढींगरी का पौषक मान

जल	–90 प्रतिशत	कैल्शियम	– 3.5 मि.ग्रा.
प्रोटीन	–3.0 – 3.5 प्रतिशत	आयरन	–1.5 मि.ग्रा.
वसा	–0.6 प्रतिशत	थायमीन	–0.48 मि.ग्रा.
पोटेशियम	– 375 मि.ग्रा.	राइबोफ्लेविन	– 0.47 मि.ग्रा.
फॉस्फोरस	–135 मि.ग्रा.	नायसिन–10.9 मि.ग्रा.	

ढींगरी की खेती में प्रयुक्त होने वाली सामग्री

ढींगरी उत्पादन की विधि :– 10 किलो ग्राम भूसे हेतु

क्र.सं.	सामग्री	परिमाण/संख्या
1.	पोलीथिन 45 X 30 से.मी.	8–12
2.	स्प्रे पम्प (1 लीटर क्षमता)	1
3.	खाली डीजल के ड्रम (अन्दर रंग किए हुए)	1
4.	रैक (बांस/लोहे के)	आवश्यकतानुसार
5.	थर्मामीटर	2
6.	गेहूँ/धान का भूसा/बाजरा/मसूर	10–12 कि.ग्रा.
7.	स्पॉन (बीज)	250–500 ग्राम
8.	फफूंद नाशक बाविस्टीन	7.0 ग्राम
9.	जीवाणु नाशक फार्मेलीन	125 मि.ली.

भूसा, कड़वी आदि का उपचार करना

ढींगरी की खेती में प्रयोग किये जाने वाले विभिन्न फसल अवशेषों को हानिकारक जीवाणुओं से मुक्त करना पड़ता है जिसके लिए चुने गये फसल अवशेष को गर्म पानी विधि या रासायनिक विधि द्वारा उपचारित किया जाता है।

रासायनिक उपचार

गर्म पानी के अलावा रासायनिक विधि से भी भूसे को जीवाणु रहित कर सकते हैं। इसके भूसे को फफूंदनाशी (बैविस्टीन) और जर्मनाशी (फार्मेलीन) द्वारा उपचारित किया जाता है। इस विधि का विवरण इस प्रकार है :–

- ड्रम में 90 लीटर पानी लेकर 10 किलोग्राम भूसे को साफ बोरी में भरकर या भूसे को सीधा ही ड्रम में डूबो दें।
- इसके साथ ही बाल्टी में 7.0 ग्राम बैविस्टीन और 125 मि.ली. फार्मेलीन को 10 लीटर पानी में मिलाकर घोल बना लें।
- बाल्टी में बनाए गए रासायनिक घोल को भूसे वाले ड्रम में उड़ेल दें और प्लास्टिक से ढक दें तथा ऊपर से वजन रख दें ताकि भूसे की बोरी ऊपर न उठे।

- करीब 16–18 घण्टे बाद भूसे को बोरी से निकालकर पानी झारे तथा भूसा निकालकर पॉलीथिन की चादर या पक्के फर्श या छलने पर फैला दें ताकि भूसे से अतिरिक्त पानी निचुड़ जाये तथा फार्मेलीन की महक पूरी तरह से खत्म हो जाये। यह स्थिति लगभग एक घण्टे में आ जाती है।
- उपरोक्त विधि से उपचारित किया गया (भूसा) बीजाई के लिए तैयार है।

बीजाई

बीजाई करने से पहले बीजाई स्थल, बीजाई में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों तथा बीजाई करने वाले श्रमिक अपने हाथों को 2 प्रतिशत फार्मेलीन घोल से धोना चाहिए ताकि अवांछनीय संक्रमण से बचा सके। पॉलीथीन की प्रत्येक थैली में 8–10 छेद करे तथा नीचे के किनारे पर हल्का कट लगायें ताकि अतिरिक्त जल निकल जायें। बीज मिलाने के दो तरीके होते हैं।

तह लगाकर (लेयरिंग)

भीगे हुए भूसे की पॉलीथिन में करीब 3 इंच की तह बनाये तथा चारों तरफ थोड़ा–थोड़ा बीज डाले तथा हलका सा दबाये इस तरह करीब 4–5 तह लगाकर 3/4 पॉलीथिन को भरे अन्त में पॉलीथिन के ऊपरी भाग को प्लास्टिक की सूतली से बांधे।

मिक्सिंग

भीगे भूसे में आवश्यकतानुसार बीज मिला देते है (हलके हाथ से मिक्स करते हैं) तथा हलके हाथ से दबाकर पॉलीथीन में भर देते हैं।

फसल प्रबंध

बीजाई किए गए थैलों को कवक जाल (माइसिलियम) फैलाव के लिए कमरें में रख दिया जाता है। दो से तीन सप्ताह तक इन बैगों में ढींगरी का कवक जाल बढ़ता रहता है और एक सफेद जाल सा बन जाता है। जब कवक जाल भूसे की पूरी परत को ढ़क लेता है तथा बैग बिल्कुल सफेद दिखाई देने लगता है तो पोलीथिन को काटकर हटा देते हैं।जिस कमरे में बैग रखे जाते हैं वहां पर स्वच्छ हवा और हल्की रोशनी का उपलब्ध होने जरूरी है इसलिए दिन में कुछ समय के लिए खिड़किया खुली रखनी चाहिए। कमरें में नमी एवं आवश्यक तापमान बनाये रखना चाहिए। ऐसी स्थिति बनाये रखने पर 5–10 दिन के अन्दर खुम्बी की छोटी–छोटी कलिकाएं बनने लगती हैं जो तीन–चार दिन के अन्दर ही बड़ी होकर पंख का आकार ग्रहण कर लेती है।

सिंचाई

बैग खोलने से पहले पानी डालने की आवश्यकता नहीं होती लेकिन जब कवक जाल पॉलिथिन में पूरा फैल जाता है। तथा थैली खोलने पर नियमित पानी से सिंचाई करनी पड़ती है। पानी करीब 24 घण्टे में 3 बार डालना पड़ता है।

तुड़ाई करना

जब छोटी–छोटी कलिकायें पंख का आकार ग्रहण कर किनारे से ऊपर की ओर मुड़ने लगें तो इन्हें तुड़ाई के योग्य समझना चाहिए। इस तरह 6 सप्ताह में तीन या चार फसल होने पर दस किलोग्राम सूख भूसे के प्रयोग से लगभग 6–7 किलोग्राम खुम्बी प्राप्त होगी।

उपयोग

तुड़ाई के पश्चात खुम्बी को सीधे (ताजा) भी खा सकते हैं या धूप में सुखाकर पॉलीथिन के लिफाफों में बंद कर रख सकते हैं जिसको भविष्य में सब्जी के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। आवश्यकता से अधिक उत्पादन होने पर इसके विभिन्न परिरक्षित पदार्थ जैसे अचार, सूप, पाउडर तथा सुखाकर रख सकते हैं।

सावधानियाँ :

- पॉलीथिन की थैलियां यदि पुरानी इस्तेमाल करे तो 2 प्रतिशत फार्मलीन के घोल से साफ करके सुखाकर काम में लेवें।
- पानी का छिड़काव किसी स्प्रेयर से ही करें क्योंकि ज्यादा पानी डालने से भूसा सड़ने लगता है तथा काला पड़ जाता है।
- कमरे का तापमान 20 से 30 डिग्री सेन्टीग्रेट व नमी 70 से 90 प्रतिशत तक होनी चाहिए।
- साफ–सफाई का ध्यान रखें। जब भी पानी का छिड़काव करने कमरें में प्रवेश करे चप्पल बाहर खोलें, हाथो को साफ धोकर ही अन्दर प्रवेश करें।
- स्पॉन भरोसेमंद प्रयोगशाला से खरीदे यदि सम्भव हो सकें तो कमरे के दरवाजे पर फार्मेलीन से भीगी टाट रखने से पैरों से बीमारियां जाने की संभावना नहीं होतीण

मशरूम की उपयोगिता

विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्य आपूर्ति के लिए जहां एक ओर फसलों का प्रति हैक्टेयर उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया जा रहा है वहीं दूसरी ओर अधिक प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थों की निरन्तर खोज की जा रही है। मशरूम उनमें से एक है।

पोषक तत्वों की दृष्टि से खुम्बी बहुत महत्वपूर्ण है इसका प्रोटीन उच्च श्रेणी का गिना जाता है। इसमें ट्राइप्टोफिन तथा लायसीन जैसे एमीनो एसिड्स होते हैं जो कि दालों में नहीं होते है।

विटामिन सी, डी, बी कॉम्पलैक्स ग्रुप में थायमीन, राइबोफलेविन, नियासीन, फॉलिक एसिड तथा बी–12 होता है जो कि गर्भवती माताओं तथा छोटे बच्चों के लिए फायदेमंद है। मशरूम में कॉलिस्टरोल बिलकुल नहीं होता तथा कार्बोज की मात्रा भी बहुत कम होती है जिससे यह मोटापा कम करने में मदद करता है तथा साथ ही डाईबिटीज से ग्रस्त रोगियों के लिए संतुलित आहार का कार्य करता है।

भारत देश में ताजा मशरूम का विपणन लघु एवं सीमान्त कृषकों द्वारा किया जा रहा है। जिनके पास सीमित संसाधन है, इसलिए किसान स्थानीय बाजार में अपना माल बेचने के लिए निर्भर रहते हैं। खुम्बी में जलीय अंश की अधिकता के कारण इसका प्रसंस्करण तथा परिरक्षण अत्यन्त आवश्यक है।

मूल्य संवर्धन

इस प्रकार मशरूम के विभिन्न व्यंजन जैसे मशरूम पिज्जा, सब्जी, पकौड़े, सूप बनाकर अपने दैनिक आहार में शामिल करना स्वास्थ्य के लिए काफी लाभदायक है साथ ही फसल की अधिकता होने पर इसे सुखाकर बोतलों में भरकर अचार बनाकर तथा सूप पाउडर बनाकर शाकाहारी लोगो को अच्छा स्वाद, अच्छी सेहत दे सकते है एवं साथ ही कुपोषण से छुटकार दिला सकते है।

सुखाकर : मशरूम की तुड़ाई के पश्चात इसकी साफ–सफाई करके इसे कपड़े या पॉलीथिन के ऊपर तब तक तेज धूप में फैला कर रखे जब इसमें से तोड़ने पर कट की आवाज आये। फिर सूखी खुम्बी को पॉलीथिन में पैक कर रखें तथा आवश्यकता पड़ने पर भिगोकर उपयोग करें।

बोतलबन्दी :

मशरूम – 1 किलो
पानी – 1 लीटर
एसीटिक एसिड़ – 10 मि. लीटर या 2 चाय के चम्मच
के.एम.एस. – 1 ग्राम

विधि–

मशरूम को 2–3 माह के लिए भी नमक तथा एसिड के घोल में रखकर परिरक्षित करते है। मशरूम को साफ पानी से धोकर के.एम.एस., नमक तथा एसिटिक एसिड का घोल बनाकर चौड़े मुंहवाली बोतल या जार में भरे। प्रयोग करने से पहले साफ धोयें।

मशरूम का अचार : मशरूम 500 ग्राम, नमक–स्वादानुसार, मिर्च–2 चाय के चम्मच, हल्दी–1 चाय का चम्मच, सौंफ–20 ग्राम, राई–50 ग्राम, कलौंजी–30 ग्राम, तेल–200 ग्राम, मैथी–50 ग्राम, विनेगर (सिरका)–1 कप।

विधि :

- मशरूम को अच्छी तरह से धोकर साफ करें तथा अखबार के ऊपर फैला दें जिससे उसका पानी सूख जाये।
- मशरूम को तेल में भूरा होने तक तलें।
- मेथी, राई, सौंफ एवं कलौंजी को दरदरा पीस लें।
- तले हुए मशरूम में सभी मसाले जैसे नमक, मिर्च, हल्दी, मैथी, राई किरायता मिलाकर सेक लें।
- ठण्डा होने के पश्चात एक कप सिरका डालकर अच्छी तरह से मिला लें।
- मर्तबान में भरकर ऊपर से तेल डाल लें तथा 3–4 दिनों के लिये धूप में रख दें।

मशरूम सूप पाउडर :

मशरूम सूप पाउडर बनाने के लिए मशरूम पाउडर में मिल्क पाउडर, कॉर्नफ्लोर, नमक, घी, चीनी, कालीमिर्च तथा पिसा जीरा का मिश्रण बनाते है। इस तरह तैयार सूप में अच्छी महक व अच्छा स्वाद होता है।

इस प्रकार मशरूम के विभिन्न व्यंजन जैसे मशरूम पिज्जा, सब्जी, पकौड़े, सूप बनाकर अपने दैनिक आहार में शामिल करना स्वास्थ्य के लिए काफी लाभदायक है साथ ही फसल की अधिकता होने पर इसे सुखाकर बोतलों में भरकर अचार बनाकर तथा सूप पाउडर बनाकर शाकाहारी लोगो को अच्छा स्वाद, अच्छी सेहत दे सकते है एवं साथ ही कुपोषण से छुटकार दिला सकते है।

कंचुआ खाद एवं अजोला उत्पादन तकनोक

सुशील कुमार शर्मा एवं सुभाष कछवाह
कृषि विज्ञान केन्द्र, काजरी, जोधपुर

वर्मी–कम्पोस्ट

केंचुओं के अवशेषष मल, उनके कोकून, सभी प्रकार के लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु, मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्व और अपचित जैविक पदार्थों का मिश्रण वर्मीकम्पोस्ट कहलाता है। साधारण तौर पर वर्मीकम्पोस्ट केंचुओं के अवशेष मल को ही कहते हैं। उपयुक्त तापमान, नमी, हवा एवं जैविक पदार्थ मिलने पर केंचुए अपनी संख्या बढाने के साथ–साथ गोबर एवं वानस्पतिक अवशेष आदि को सड़ाकर जैविक खाद के रूप में परिवर्तित करते रहते है। केंचुए दो प्रकार के होते है।

गहरी सुरंग बनाने वाले– इस तरह के केंचुए नाईट कॉलर्स (इंडोगीज) कहलाते हैं। इनकी लम्बाई अधिक (8–10 इंच) होती है और ये नमी की तलाश में काफी गहराई (8–10 फुट) तक जमीन में चले जाते हैं। इनका वजन 5 ग्राम तक का होता हैप यह मृदा को अधिक 90 प्रतिशत और कार्बनिक पदार्थ को कम 10 प्रतिशत खाते हैं।

सतही केंचुए– इस तरह के केंचुए ईपीगीज (*आईसीनिया फोइटिडा*) कहलाते हैंप इनकी लम्बाई कम से कम 3 से 4 इंच और वजन आधा ग्राम से एक ग्राम तक होता है। ये लाल रंग के होते हैंप जो मृदा कम (10%) और कार्बनिक पदार्थ ज्यादा (90%) खाते हैं। अतरू वर्मीकम्पोस्ट के लिये अधिक उपयुक्त रहते हैं।

तापमान, नमी खाद्य पदार्थों की उपयुक्त परिस्थितियों में केंचुए चार सप्ताह में वयस्क होकर प्रजनन लायक बन जाते हैंप एक केंचुआ एक सप्ताह में दो से तीन कोकून देता है एवं एक कोकून में तीन से चार अंडे होते हैंप एस तरह एक प्रजनन में केंचुआ 6 महीने में 250 केंचुए तक पैदा करता ह।

वर्मीकम्पोस्ट बनाने की विधि

वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिये सबसे पहले चार से छरू फुट की ऊंचाई की एक शेड तेयार करते हैं ताकि उपयुक्त तापमान एवं छायाँ रखी जा सकेप जमीन की सतह पर क्यारी की लम्बाई 40–50 फुट और चौड़ाई 3 फुट रखते हैं तथा क्यारी में तिनके, भूसा जूट अथवा गन्ने के थ्रेश आदि को सतह पर 3 इंच की मोटाई में तह लगाकर बिछोना बनाया जाता है और इस तरह से बनाई हुई पहली परत पर पानी छिड़क दिया जाता है। इस पर 2 इंच मोटाई की सतह तक सुखा हुआ कम्पोस्ट या गोबर की खाद बिछाई जाती है और पानी डालकर गीला कर दिया जाता है। इस दूसरी परत पर 1 इंच मोटी परत वर्मीकम्पोस्ट की,जिसमे केंचुए भी मिले होते हैं,डाल दी जाती है तथा इस तीसरी परत पर 2 इंच मोटाई की सतह तक दुबारा कम्पोस्ट या गोबर की खाद बिछाई जाती है। अंत में इस परत पर 10 से 12 इंच मोटाई में गोबर के साथ घासफूस, पत्तिया एवं पत्तियों के मिले हुये टुकडो का कचरा पांचवी परत के रूप में बिछा दिया जाता हैं 30 प्रतिशत तक नमी बनाये रखने के लिये हर परत पर पानी का छिड़काव करना चाहिए इस तरह पांचो परतो की कुल ऊंचाई लगभग डेढ़ फुट तक हो जाएगी इसको ऊपर से बोरी के तात से अच्छी तरह से ढक कर पानी छिडकते हैं ताकि नमी 30 प्रतिशत बनी रहे गर्मियों के दिनों में 3 से 4 बार पानी छिडकना चाहिए केंचुए सड़ती हुई उपरी सतहों को खाने लगते हैं तथा 2 माह के अन्दर ही गोबर मिश्रित घास फूस पत्तियां, वानस्पतिक अवशेष एवं कचरा आदि वर्मी कम्पोस्ट में बदल जाते हैं जब वर्मी कम्पोस्ट तैयार हो जाता हैं तब इसका रंग गहरा कला हो जाता है।

पोषक तत्त्व	वर्मीकम्पोस्ट	गोबर की खाद
नत्रजन प्रतिशत	2.5-3.0	0.5-0.93
फॉस्फोरस प्रतिशत	1.5-2.00	1.00
पोटाश प्रतिशत	1.5-2.00	1.31
पी एच मान	7.0-7.5	7.2-7.9
उपयोग या प्रयोग दर	लगभग 5 टन/हैक्टेयर	लगभग 10 टन/हैक्टेयर

वर्मीकम्पोस्ट की प्रयोग विधियाँ

फलदार वृक्ष परिपक्व बड़े पेड़ के चारों ओर एक मीटर की परिधि में 5 किलोग्राम वर्मीकम्पोस्ट प्रति पेड़ की दर से मिट्टी में सीधे ही डाले। इसके पश्चात् ताजा गोबर एवं जैविक पदार्थ उतनी ही मात्रा में और डाल देवे तथा ड्रिप विधि से मिट्टी में निरंतर नमी बनाये रखे। गोबर एवं वानस्पतिक अवशेष समय –समय पर डालते रहें जिससे केंचुओ द्वारा उसको खाद के रूप में परिवर्तित किया जाता रहे और पेड़ो को पोषक तत्त्व लगातार मिलते रहें।

सब्जी वाली फसलें वर्मीकम्पोस्ट 7.5 टन प्रति हैक्टर की दर से खेत में डाल कर पौधों की रोपाई बीज की बुवाई करें। अगली फसल को लेने से पूर्व वर्मीकम्पोस्ट को गोबर एवं वानस्पतिक अवशेष के साथ पुनः खेत में डाले जिससे खेत में विद्यमान केंचुए इसे खाकर जैविक खाद के रूप में परिवर्तित कर फसल को पोषक तत्त्व उपलब्ध करा सके।

मौसमी फसलें दृऐसे खेतों में जहाँ प्रतिवर्ष दो अथवा अधिक फसलें ली जाती हैं वहां 5 टन वर्मीकम्पोस्ट प्रति हैक्टर को गोबर एवं वानस्पतिक अवशेष की बराबर मात्रा में मिलाकर खेत में दें।

अजोला

पशुधन के विकास हेतु उत्तम प्रजनन के साथ–साथ पशुपोषण का विशेष महत्व है। पशुधन की उत्पादन क्षमता हरे चारे पर निर्भर करती है। अतः पशुओं की दूध क्षमता बढ़ाने के लिए पशुओं को समुचित मात्रा में हरा चारा खिलाना अत्यन्त आव"यक है। पशुपालन व्यवसाय में 65 से 70 प्रतिषत पशुओं को दिये जाने वाले आहार पर खर्चा होता है।

अधिकांषतः पशुपालक पशुओं को सूखा भूसा, कडबी आदि खिलाते हैं, जिसमें पोषक तत्व बहुत कम होते हैं। पशुओं को पौष्टिक आहार खिलाने का तात्पर्य है कि पशु के भोजन में वह सभी तत्व एक निश्चित अनुपात व मात्रा में होने चाहिए, जो पशु के शरीर की रक्षा और उनसे होने वाले उत्पादन के लिए आव"यक है। इनमें मुख्य रूप से प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा व खनिज लवण होने चाहिए। हरे चारे में लगभग ये सभी तत्व होते हैं, जो पशुओं को मिल जाते हैं तथा थोड़ी बहुत कमी संतुलित आहार के माध्यम से पूरी हो जाती है।

हरा चारा वर्ष पर्यन्त मरु क्षेत्र में पशुओं को उपलब्ध हो सके इसके लिए पशुपालकों को चाहिए कि वे अपने खेत/घर में अजोला लगायें क्योंकि शुष्क क्षेत्र में वर्षा ऋतु के दौरान ही हरा चारा पशुओं को उपलब्ध होता है। अतः श्रिन क्षेत्रों में जल की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता नही है वहां पर पशुओं को वर्ष भर पौष्टिक हरा चारा अजोला द्वारा पशुओं को खिलाया जा सकता है।

अजोला एक फर्न है जो कि शैवाल की तरह दिखाई देती है। इसको पानी में उगाया जाता है तथा पशुओं को चारे या बाँटे के साथ मिलाकर खिलाया जाता है। इसका उपयोग हरी खाद के रूप में भी किया जाता है। अजोला का घर पर उत्पादन करने पर 50 पैसे प्रति किलोग्राम खर्चा आता है जो कि नही के बराबर है। बाजार में कोई भी चारा इतना सस्ता उपलब्ध नहीं है।

उपयोगिता

1. इसको सभी पशुओं जैसे गाय, भैंस, मुर्गी, भेड़, बकरी, खरगोश और मछली इत्यादि को खिलाया जा सकता है
2. यह सुपाच्य है तथा इसे अन्य आहार के साथ मिलाकर भी खिलाया जाता है।

तालिका 1: अजोला (*Azolla pinnata*) का रासायनिक विश्लेषण

घटक	% सूखा तत्व (Dry Matter)
जैविक पदार्थ	75-78
क्रूड प्रोटीन	20-25
ईथर उद्धरण (Ether extract)	2.93
क्रूड फाइबर	12-15
राख	28.7
नाइट्रोजन मुक्त उद्धरण (NFE)	31.1
कैल्शियम	2.07
फास्फोरस	0.77
गैर प्रोटीन नाइट्रोजन	0.99
आयरन	0.25
मैंगनीज	0.27
मैगनीशियम	0.17
सोडियम	0.49
पोटेशियम	4.93
कॉपर	17.6 पी पी एम
जिंक	71.8 पी पी एम

3. इसको खिलाने से पशुओं का दूध 10–15 प्रतिशत तक वृद्धि पायी गयी है।
4. इसमें पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन, अमीनो अम्ल, विटामिन (ए,बी$_{12}$ और बीटा केरोटीन), वृद्धि उत्प्रेरक एवं पोषक तत्व जैसे – कैल्सियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम, आयरन, कॉपर और मैग्निशियम होते हैं, जिससे पशु समय पर पाले (ताव) में आ जाता है। अकाल के दौरान इसे खिलाने से रतौंधी रोग नहीं होता है।
5. इसे जैविक खाद के रूप में भी उपयोग में लाया जाता है जिससे भूमि में नाईट्रोजन की मात्रा बनी रहती है।
6. अजोला खिलाने से पशुओं में पोषण की लागत 25 से 30 प्रतिशत तक कम की जा सकती है तथा दूध की गुणवत्ता में भी वृद्धि पायी गयी है।

तालिका 2: तुलनात्मक चारे के रूप में अजोला की पौष्टिकता

पशु आहार	क्रूड प्रोटीन(%)	फाइबर (%)	पाच्य पोषक तत्व (%)
चारा	5-13	18 से अधिक	60 से कम
बाटा	15-20	18 से कम	70
चारा फलियां	16-20	30	60 से कम
अजोला	20-25	12-15	60-65

तालिका 3: हरा चारा फसलों तथा अजोला में सूखा तत्व और क्रूड प्रोटीन

क्र. सं.	चारा	सूखा तत्व (%)	क्रूड प्रोटीन (%)
1	संकर नैपियर, ज्वार, बाजरा, मक्का	10-15	10-12
2	लोबिया	10-15	15-20
3	सूबबूल	10-15	20-25
4	रिजका	5-10	22-25
5	सिवण घास	10-15	22-25
6	बरसीम	5-10	20-25
7	धामण घास	10-15	8-12
8	अजोला	7-11	20-25

लागत

अजोला की नियमित उपज बनाये रखने के लिए एक इकाई की लागत निकाली गई है। इकाईयों की वास्तविक संख्या पशु की संख्या के आधार पर बढाई जा सकती है। लागत का विवरण नीचे दिया गया है।

तालिका 4: एक अजोला की क्यारी तैयार करने में कुल लागत

क्र.सं.	मद	संख्या	दर (रू)	लागत (रू)
1.	गड्ढा बनाने की लागत (12′ X 3′ X 1′)	1	100	100/-
2.	निर्माण सामग्री (पोली नेट)	एक मुश्त	–	1000/-
3.	गोबर	5 किलो/गड्ढा	3/किलो	15/-
4.	उर्वरक			0/-
	एस एस पी – 1 किलो / गड्ढा	1 किलो	50	50/-
	खनिज मिश्रण – 1 किलो/गड्ढा	1 किलो	50	50/-
5.	अजोला कल्चर	एक मुश्त	–	100/-
6.	विविध	–	–	100/-
कुल लागत				**1415/-**

तालिका 5: अजोला उत्पादन के लिए आदर्श दशायें

1.	पी.एच.	4.5–7.5
2.	तापक्रम	20–35^{O}C
3.	टाद्रता	65–85%
4.	प्रकाश	50%
5.	पानी की गहराई	8–10 से.मी.

कैसे खिलायें

अजौला बड़े पशुओं (गाय, भैस) को 2–3 किलोग्राम और छोटे पशुओं (भेड़, बकरी) को 1–2 किलो प्रति पशु बाँटे में डालकर खिला सकते हैं। इसके अलावा सूखे चारे के साथ मिलाकर ज्यादा से ज्यादा भी खिला सकते हैं।

अजोला का उत्पादन पशुपालक घर पर इस प्रकार कर सकते है

1. सर्वप्रथम किसी भी आकार का गड्ढा, एक फीट गहरा खोदकर, इसमें पॉलीथीन बिछाकर तैयार करें।
2. पॉलीथीन के ऊपर थोड़ी मात्रा में (करीब 2–4 इंच) उपजाऊ मिट्टी बिछा दें।
3. मिट्टी के ऊपर गोबर (4–5 किलोग्राम) करीब 1 महीने पुराना 15 से 20 लीटर पानी में घोलकर एवं सुपर फॉस्फेट (30–40 ग्राम) को मिश्रित कर मिट्टी के ऊपर बिछा दें। इसमें करीब 10–15 से.मी. तक पानी भर दें।
4. अजोला उत्पादन के लिए पानी की पी.एच. 4.5 से 7.5 के बीच रहनी चाहिए।
5. यदि वातावरण का तापक्रम 30^{0}C से ज्यादा है तो सीधी सूर्य की किरणों से बचाना चाहिए।
6. यदि पानी की समस्या हो तो स्नानगृह तथा प"ाुओं के बाड़े का भी पानी काम में ले सकते हैं।
7. करीब आधा से एक किलोग्राम शुद्ध अजोला कल्चर बीज को पानी भरे गड्ढे में बिखेर दें।
8. एक सप्ताह बाद अजोला उगकर एक परत की तरह दिखाई देने लगता है।
9. प्रत्येक सप्ताह 20 ग्राम फॉस्फेट एवं एक किलो गोबर डाल देना चाहिए। इससे अजोला में पर्याप्त पोषक तत्व उपलब्ध हो जाते हैं।
10. 2 महिने में गड्ढे की 50 प्रति"ात मिट्टी और पानी को बदल देना चाहिए तथा पुनः इसी अनुपात मे ंवापस डाल देना चाहिए।
11. प्रत्येक 3 महीने बाद मिट्टी को अंदर से पूरा बदल देना चाहिए।
12. अजोला बहुत जल्दी बढ़ता है इसलिए 1–2 किलोग्राम प्रतिदिन(500–600 ग्राम/मी^{2} प्रति दिन) उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।
13. यदि अजोला हानिकारक कवक से प्रभावित हो जाय तो इसको पूरा नष्ट कर देना चाहिए और गडढ़े को साफकर पुनः कलचर डालना चाहिए।

महिलाओं द्वारा आय उपार्जन हेतु लाभप्रद तकनीकियाँ

सोमा श्रीवास्तव एवं सविता सिंघल
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

इकसवीं शताब्दी में, महिलाओं ने न सिर्फ धन अर्जन करने में अपनी भूमिका दर्ज कराई है बल्कि भावी संगठनों का निर्माण करते हुए अभिकर्ताओं का स्वरूप भी परिवर्तित किया है। हाल के वर्षों में, महिलाओं ने जीवन के हर क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति की है।सामाजिक नैतिकता की बाध्यताओं को पार करते हुए घर तथा कार्यस्थल पर स्वयं को सफल उद्यमी एवं कार्यकारी व्यावसायिकों के रूप में साबित किया है।
विविध कार्यों को निष्पादित करने में महिलाओं की क्षमता एक अद्‌भुत विशिष्टता है जो कार्यस्थल विशेषकर वरिष्ठ प्रबंधन स्तर पर सहज ही परिलक्षित होती है, एक ही लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित करते हुए जहां व्यक्ति को भिन्न – भिन्न प्रकार की जिम्मेदारियों का निर्वहन करना पड़ता है और पहलों की प्राथमिकता सतत निर्धारित करनी होती है। भारत आर्थिक विकास के संक्रमण काल से गुजर रहा है, ऐसे में उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी के लिए व्यापक अवसर उपलब्ध हैं। बंगलुरू, हैदराबाद, चेन्नई और तिरुअनंतपुरम जैसे शहरों में तो कई कामयाब महिला उद्यमी पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिला कर बढ़ती नजर आती हैं.

लघु व कुटीर उद्योग

प्रत्येक व्यक्ति के मन में उद्यमी बनने, सम्पत्ति कमाने, नाम कमाने तथा आत्मनिर्भर बनने की इच्छा होती है। मूलतः उद्यमी होने के लिए पाँच कसौटियाँ हैं। उद्यमी बनने का निर्णय करने पर इन कसौटियों को पार करने के लिए उचित 'अभ्यास' करना आवश्यक है। सम्पत्ति अर्जित करने के लिए लगन, स्वभाव और आचार में लचीलापन, व्यवसाय प्रक्रिया के रहस्य की जानकारी, उद्योग की श्रृंखला, परस्पर सम्बन्ध निर्माण करने की तैयारी तथा बिना थके, बिना निराश हुए कोशिश करते रहने की मानसिक - शारीरिक - सांस्कृतिक तैयारी।

भारत जैसे विकासशील अर्थव्यवस्था के विकास में लघु उद्योग एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। लघु उद्योग स्थानीय संसाधनो का उचित / इष्टतम उपयोग द्वारा स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने के अवसर प्रदान करते है। लघु उद्योग में हुए विकास ने आधुनिक तकनीक अपनाने तथा लाभकारी रोजगार में श्रम शक्ति का अवशोषण करने के लिए उद्यमशीलता की प्रतिभा का उपयोग करने को प्राथमिकता प्रदान की है जिससे उत्पादकता और आय के स्तर को बढ़ाया जा सके। लघु उद्योग उद्योगो के प्रसार तथा स्थानीय संसाधनों के उपयोग में सुविधा प्रदान करते हैं।

प्रमुख लघु व कुटीर उद्योग उद्योग इस प्रकार है :-

- आयुर्वेदिक फार्मेसी,
- सौंदर्य व श्रृंगार प्रसाधन उद्योग,
- अगरबत्ती उद्योग,
- डेरी उद्योग,
- कन्फैक्शनरी उद्योग,
- मोमबत्ती उद्योग,
- वाशिंग डिटरजेंट पाउडर,

- पापड़, बड़ियां और चाट मसाला उद्योग,
- फलों व सब्जियों की डिब्बाबन्दी एवं संरक्षण,
- खिलौना और गुड़िया उद्योग, दियासलाई उद्योग,
- मसाला उद्योग,
- डबल रोटी उद्योग,
- सोप एंड क्लीनर्स इंडस्ट्री,
- सिल्क स्क्रीन द्वारा कपड़ों पर छपाई,
- बिस्कुट उद्योग,
- चीनी उद्योग (खांडसारी),
- चिप्स तथा वेफर्स,
- नूडल्स एवं सेवइयां,
- सूखी संरक्षित और डिब्बा बंद सब्जियां,
- सॉसेज, केचअप व अचार

ग्रामीण जनता. द्वारा संचालित किये जानेवाले उद्योगों के चयन के लिए सीमाओं (लिमिटेशन) और अवश्यकताओ को ध्यान में रखकर उत्पादन एवं प्रशिक्षण की योजना बनायीं गई है | उद्योग प्रारंभ करने से पूर्व उसके चयन के लिए निम्न बिन्दूओ पर ध्यान दिया गया है

ग्रामीणों की सीमाए (**लिमिटेशन**)

- उनमे उद्योग वृति नही है |
- अनुभव का विशवास नही है |
- पूंजी की कमी है |
- शिक्षा की ट्रेनिंग नही है |

लघु एवं कुटीर उद्योगों की आवश्यकता क्यों है

- वे अपनी रोजमर्रा की आवश्कता के लिए आत्मनिर्भर बने , इससे खपत की समस्या का भी समाधान होगा |
- उद्योग प्रदुषण रहित होंगे जिससे प्रक्रति संकलन बना रहे | ऐसे उद्योग का चयन किया जाये जिनको सहज,सरल व स्वाभाविक तरीके से किया जा सकेगा |
- जो वे जानते है, उससे प्रारंभ होंगे |
- जो उनके पास है ,उससे निर्माण किया जायेगा |
- ऐसे उत्पाद चयन होंगे जो ग्रामीण क्षेत्र के स्थानीय संसाधनों पर आधारित हो |
- उत्पाद ऐसा होगा जिसकी बिक्री की दिक्कत ना हो जिसकी अधिकांस खपत आसानी से अपने तथा आसपास के गावो में हो जाये |
- शहर में बिक्री हेतु जाना भी पड़े तो वहा स्पर्धा ना हो |
- उद्योग ऐसे होंगे जितनी पूंजी व्यक्ति या समूह के पास है उसी से वह प्रारम्भ हो जाये |
- किसी के अनुदान अथवा कर्ज का मूह न ताकना पड़े |
- एक बार उद्योग अपने प्रयासों से ठीक चलने लगे उसे गती देने के लिए बाहरी सहायता ऋण , अनुदान आदि अवश्य लिया जा सकते है |

- ऐसे उद्योगों को प्राथमिकता दी जाएगी जो कृषि के सहायक धंधे के रूप में हो अथवा कृषि से प्राप्त उत्पाद (कच्चे माल) पर आधारित हो |

आधुनिक ग्रामीण उधोग के प्रकार

फ्रेंचायसी

फ्रेंचायसी अर्थात किसी कंपनी अथवा उद्योग समूह का विक्रय का अधिकार / किसी कंपनी एजेंसी लेकर अपना रोज़गार स्थापित करने का नया कांसेप्ट ही फ्रेंचायसी है | इससे भी रोज़गार के काफी अवसर है |

समुपदेश अथवा मार्गदर्शन केंद्र

किसी भी क्षेत्र में प्रवीणता हासिल कर उस क्षेत्र के ज्ञान का उपयोग आप मार्गदर्शन केंद्र के लिए क्र सकते है|इससे आपका लघु उद्योग शुरू हो सकता है | इसको जगह भी कम लगती है| और लागत भी| विज्ञापन, व्यवसाय, मार्गदर्शन, रोज़गार मार्गदर्शन,कंप्यूटर कंसल्टिंग कम्पनीयों को मजदूरो की पूर्ति करना,इन्शुरन्स आदि का समावेश होता है |

सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय महिलाओं के लिए रोजगार के अवसर को बढ़ाने के लिए विशेष, समर्पित महिला उद्यमिता विकास योजनाएं कार्यान्वित कर रहा है। ये योजनाएं हैं -व्यापारस्कीम और महिला केयर योजना। ट्रेड स्कीम में व्यापार संबंधी उद्यमिता सहायता और विकास संबंधी प्रशिक्षण**,** व्यापार, उत्पाद, सेवा आदि से संबंधित सूचना और परामर्शी विस्तार कार्यकलापों के माध्यम से विशेष रूप से महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण की परिकल्पना की गई है। इस योजना के तहत राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा वित्तीय ऋण और गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से गैर कृषि कार्यों में लगी महिलाओं द्वारा स्वरोजगार उद्यम आरंभ करने और क्षमता निर्माण के लिए 30.00 लाख रुपये की अधिकतम सीमा तक ऋण के 30 प्रतिशत की दर पर सरकार द्वारा अनुदान प्रदान किया जाता है।

मोमबत्ती बनाना

विवरण :

मोमबती बनाना एक ऐसा घरेलू उद्योग है जिसमें थोडी तो पूंजी की आवश्यकता होती है व ग्रामीण महिलायें, बेरोजगार नवयुवक या घर के सदस्य सरलता से इस काम को कर सकते हैं। मोमबत्तियां बारह महीने ही बिकती है। अतः ग्रामीण बहने इसे घरेलू उद्योग के रूप में आरम्भ कर सकती है। इसमे काम आने वाला पेराफीन मोम आसानी से उपलब्ध हो जाता है–

आवश्यक सामग्री :

1. एल्यूमीनियम के सांचे
2. पेराफीन मोम
3. सूत की बती (मोटा धागा)
4. चाकू
5. तेल
6. मोम पिघालने के लिये बर्तन
7. ट्रे
8. मोम डालने के बर्तन

निर्माण विधि :

1. एल्यूमिनियम के सांचे के बगली कलेम्पों को खोलकर तेल चुपड़ दिया जाता है।
2. सांचे के बीच के पलड़ों के ऊपर एक लोहे की पत्ती लगी होती है जिसमें छोटे–छोटे खांचे कटे होते है। पल्लडो के ऊपर की पत्तों में एक सिरें पर सूत की बत्ती को गांठ देकर बांध देते है।
3. यह बत्ती सांचे में फंसाते हुए पल्लड़ो के नीचे के भाग में बने हुए सांचे में होकर लाई जाती है।
4. पल्लडो के नीचे दूसरी ओर सांचे में ले आते है। इस प्रकार बत्ती डालते चले जाते है।
5. अब दोनों पलड़ों पर क्लेम्प लगा देते है।
6. पेराफीन मोम को पिघला लिया जाता है।
7. एक साफ टिन के डिब्बें या किसी बर्तन की सहायता से पिघले मोम को एक ही जगह से सांचे में डालते रहते है जब तक कि सांचा पूरा न भर जाये।
8. कुछ देर पश्चात् जब सांचा ठण्डा हो जाये तब ऊपर व नीचे की बत्ती को चाकू से काटकर क्लेम्पों को हटा देते है तथा दोनों पल्लड़े

वाशिंग पाऊडर बनाने की विधि

सामग्री

1.	सोडा ऐश	3 कि.ग्रा.
2.	मीठा सोडा	100 ग्राम
3.	एसिड स्लरी	1/2 किलो
4.	लीसापोल	1/2 किलो
5.	नील	25 ग्राम
6.	टीनापोल	10 ग्राम

विधि :

1. सर्वप्रथम सोडा ऐश एवं मीठे सोडे को एक चौडे बर्तन (कूंडा) में मिलाएं।
2. उपरोक्त मिश्रण में धीरे–धीरे एसिड स्लरी डालें।
3. लीसा पोल डालकर अच्छी तरह हिलाएं।
4. अन्त में नील एवं टीनापोल डालें तथा अच्छी तरह हिलाकर आटे छानने की छलनी से छाने।
5. उपयुक्त पॉलिथीन में भरें।

अनुमानित लागत 20 रूपये प्रति किलो।

सस्ता साबुन बनाना

सामग्री

1.	कास्टिक सोडा	1 भाग
2.	पानी	4 भाग
3.	तूंबे का तेल या अन्य सस्ता तेल	4 भाग
4.	मिटटी का बर्तन, बाल्टी, ट्रे, लकडी की डंडी।	

विधि :

1. कास्टिक सोडे का चार गुना पानी मिट्टी के बर्तन या बाल्टी में लेकर उसमें कास्टिक सोडा डालकर लकड़ी की डंडी से हिलाते हुए घोल बनाये।तथा 12 घंटे के लिए रख दें।
2. सोडे का चार गुना तेल लेकर पतली धार से घोल में डालते जाये व घोल को लकड़ी की डंडी से लगातार हिलाते रहें।
3. तेल पूरा डालने के बाद भी हिलाते रहें जब कि घोल इतना गाढ़ा हो जाय कि जब तक कि लकड़ी उसमें खड़ी रह सके।
4. अब इस घोल को ट्रे में डालकर जमा दें। 2 या 3 दिन बाद ट्रे को उलट कर साबुन का केक निकाल लें व चाकू से काटकर बट्टियां बना लें।

सावधानियां :

1. साबुन एल्युमिनीयम के बर्तन में कभी नहीं बनावें।
2. कास्टिक सोड़े के घोल में हाथ न लगायें।

तुड़ाईउपरांतप्रबंधनएवंमूल्यसंवर्धितउत्पादविकास

सोमा श्रीवास्तव, सविता सिंघल एवं पूनम कलश
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

शुष्क क्षेत्र के रहवासियों ने सदियों पहले से अपने भोजन को संपूर्ण एवं सुरूचिपूर्ण बनाने के लिये विभिन्न प्रकार के मूल्य संर्वधन तकनीकियाँ विकसित कर ली थी जिनका उद्देश्य फसल के तैयार होने से पहले व अकाल पड़ने की स्थिति से पहले भोजन को संरक्षित करना था। इससे पता चलता है कि हमारे पूर्वज भी मूल्य संवर्धन के महत्व को समझते थे व इसे अपनाते थे। यदि हम राजस्थान की बात करें तो यहाँ पानी की कमी के कारण व अन्य वातावरणीय परिस्थितियों की वजह से फल व सब्जियों का उत्पादन कम ही हो पाता हैं।

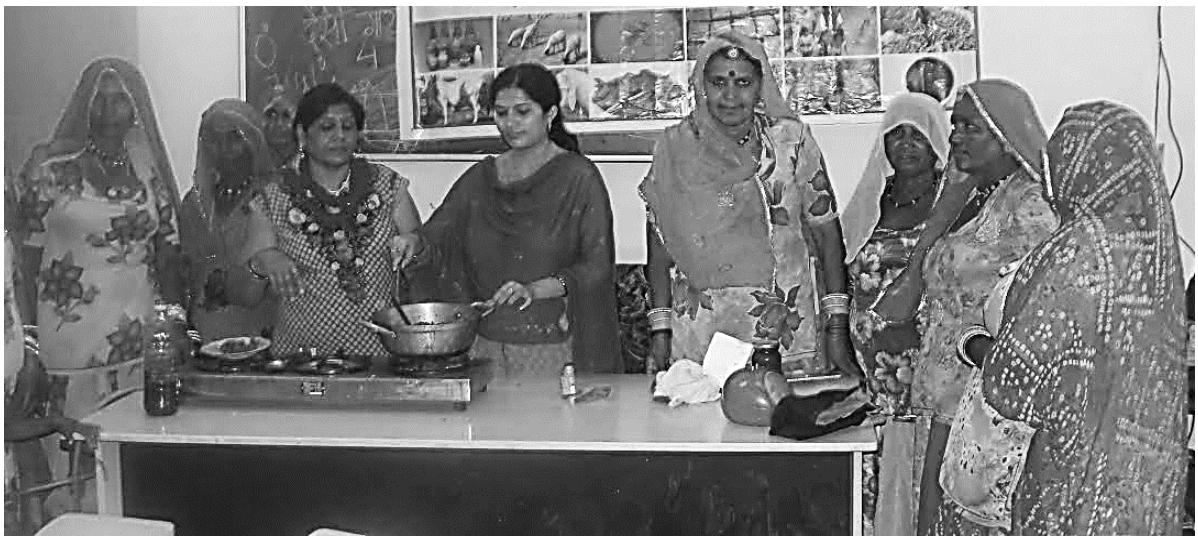

प्रकृति ने यहाँ कुछ विषिष्ट प्रकार के प्राकृतिक संसाधन प्रदान किये हैं जिनके कारण सामान्य फसलों की अपेक्षा मोटे अनाज जैसे बाजरा, दलहनी फसलें जैसे मूंग व मोठ, विभिन्न वृक्ष प्रजातियाँ जैसे खेजड़ी, कुमट व इनके अतिरिक्त शुष्क वातावरण में उत्पन्न होने वाले फल सब्जियों यहाँ के प्रमुख उत्पाद हैं। भारत कृषि प्रधान देश अवश्य है पर यहाँ खेत जितने छोटे हैं उपज जितनी कम है और खेती पर निर्भरता जितनी अधिक है उसे देखते हुये केवल खेती पर आश्रित होने पर न व्यक्ति का पेट भर सकता है और न ही परिवार का पालन पोषण हो सकता है तथा न ही गाँवों का उत्थान हो सकता है।देहातों में अगर जनता का जीवन स्तर उठाना है वहाँ समृद्धि एवं खुशहाली लानी है तथा विकास व रोजगार के साधन बढ़ाने हैं तो गाँवों में लघु खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों को बढ़ावा देना होगा।

फलों व सब्जियों की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए तोड़ाई, भंडारण व परिरक्षण

फलों व सब्जियों की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए तोड़ाई, भंडारण व परिरक्षण यानी प्रिजर्व करने की नवीनतम तकनीक का इस्तेमाल करना चाहिए, क्योंकि फलों व सब्जियों में पानी की अधिक मात्रा होने के कारण वे तोड़ाई के बाद शीघ्र खराब हो जातेहैं। इस प्रकार कुल फलों व सब्जियों का 30–35 फीसदी भाग खराब हो जाताहै. ज्यादातर फलों व सब्जियों की तोड़ाई हरी अवस्था में की जातीहै, जिस से उन की गुणवत्ता पर उलटा असर पड़ताहै।

तुड़ाई

फलों की तोड़ाई फलों के पकने के आधार पर की जातीहै। तरबूज, खरबूजा, बेर, जामुन, अमरूद व नीबू वर्गीय फलों को पेड़ों पर पकातेहैं और बाद में तोड़तेहैं। लेकिन आम, केला, पपीता व चीकू वगैरह फलों को पकने से पहले तोड़ाई कर कमरों में पकातेहैं. सब्जियों की तोड़ाई तब की जाती है। जब वे मुलायम व रेशा रहित होती हैं. लिहाजा सब्जियों की हरी अवस्था तोड़ाई के लिए सब से अच्छी होती है। फलों व सब्जियों की तोड़ाई में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

- फलों व सब्जियों की तोड़ाई सुबह के समय करनी चाहिए
- फलों व सब्जियों की तोड़ाई डंठल सहित करनी चाहिए
- यदि फलों व सब्जियों पर कीटनाशी या फफूंदनाशी या जहरीले रसायनों का इस्तेमाल किया गया हो तो कम से कम उन्हें 1 हफ्ते बाद ही तोड़ा जाना चाहिए
- तरबूज, खरबूजा, कद्दू व टमाटर के फलों को पकी हालात में तोड़ा जाना चाहिए
- बीन, लोबिया, खीरा, बैगन, भिंडी, लौकी, तुरई व पत्तेदार सब्जियों को मुलायम व हरी अवस्था में तोड़ा जाना चाहिए
- गोभी वर्गीय सब्जियों को तैयार होने पर काटें
- प्याज, लहसुन व आलू पूरी तरह पकने पर ही खोदें
- केला, पपीता, चीकू, आम, कटहल, शरीफा व बेल वगैरह फलों को पेड़ से पकने की हालत में तोड़ कर कमरे में पकाना चाहिए
- अंगूर, अमरूद, जामुन, बेर, फालसा व नीबूवर्गीय फलों को पेड़ पर पकने के बाद तोड़ना चाहिए

भंडारण

जब खेत के ज्यादा फल पकने की हालात में आ जाते हैं, तो उन्हें एकसाथ तोड़ना जरूरी हो जाताहै। ऐसे में यह जरूरी है कि सही ढंग से तोड़ाई कर के उन का अच्छी तरह भंडारण किया जाए। अगर सब्जियों व फलों को साधारण कमरे के तापमान पर खुले हवादार स्थान पर जूट की बोरी पर रख कर पानी छिड़कते रहें तो वे 2–3 दिनों तक बहुत आसानी से रखे जा सकते हैं। निम्न बातों का ध्यान रख कर तोड़ाई के बाद सब्जियों व फलों का जीवनकाल बढ़ाया जा सकता है

- भंडारण के लिए उन्हीं फलों व सब्जियों का चुनाव करना चाहिए जिन पर कीट, बीमारी, चोट व खरोंच न लगी हो.
- पत्तीदार सब्जियों को काटने के बाद भीगे कपड़े में लपेट कर रखें और समय–समय पर उन में पानी छिड़कते रहें.
- तोड़ाई के बाद खेत की गरमी को खत्म करने के लिए फलों व सब्जियों को हवादार कमरे या किसी छायादार स्थान पर रख कर गरमी खत्म होने के बाद भंडारण करना चाहिए.
- कार्बन डाई आक्साइड का 5–10 फीसदी उपचार गाजर, खरबूजा व आलू वगैरह में बेहतर रहता है, जिस से भंडारण कूवत बढ़ जाती है।

सब्जी एवं फल परिरक्षण

परिरक्षण द्वारा यानी प्रिजर्व कर के हम बिना मौसम के तमाम सब्जियों व फलों का प्रयोग कर के लाभ उठा सकतेहैं व उन की उपयोगिता बढ़ा सकते हैं। तमाम फलों व सब्जियों को हम विभिन्न कामों में इस्तेमाल कर सकते हैं।

फल एवं सब्जियों में मूल्य संवर्धनध परिरक्षण का महत्व

1. मौसमी उत्पादन का संरक्षण एवं नुकसान से बचाव
2. विभिन्न उत्पादों का निर्माण तथा एक स्थान से दूसरे स्थान तक उत्पाद के प्रयोग को संभव बनाना
3. आय उपार्जन के साधन बढाना
4. कच्चे उत्पाद से संवर्धन के द्वारा उसके गुणवत्ता, महत्त्व एवं मूल्य का बढना
5. खाद्य सुरक्षा को बढावा देना

यदि हम राजस्थान की बात करें तो यहाँ पानी की कमी के कारण व अन्य वातावरणीय परिस्थितियों की वजह से फल व सब्जियों का उत्पादन कम ही हो पाता हैं। यदि इन्हें समय पर परिरक्षित कर लिया जाये तो इनका न केवल घरेलू स्तर पर उपयोग कर सकते हैं, बल्कि इनका विपणन कर अधिक आय भी प्राप्त कर सकते है। फल व सब्जियों के मूल्य संवर्धित उत्पाद भी आय प्राप्त करने का अच्छा साधन है। जैसे जैली, स्क्वैश, ज्यूस, मुरब्बा, कैण्डी, सिरका, अचार, आदि। इन्हे बनाने की तकनीकी सरल होने के साथ–साथ अधिक पूंजी निवेश के बिना भी स्थापित की जा सकती है तथा अच्छी आय भी प्राप्त की जा सकती है। किसी भी उत्पाद का मूल्य संवर्धन करने के लिये उसकी उपलब्धता का समय, उसके मूल्य संवर्धन के लिये तैयार होने की अवस्था का ज्ञान, तोड़ने की उपयुक्त विधि, उपयुक्त तकनीकियाँ, पैकेजिंग, लेबलिंग उसे भंडारण करने आदि का पहले से अच्छी तरह ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये। निम्नलिखित उद्यमों को अपनाकर एक सफल लघु–उद्योग इकाई की स्थापना की जा सकती है तथा इसके लिये सरकार द्वारा विभिन्न संस्थानों में प्रशिक्षण कार्यक्रम व बैंको द्वारा लघु ऋण की भी व्यवस्था की जाती है।

मूल्य संवर्धन करने के लिये मूलभूत आवश्यकतायें क्या हैं?

1. उत्पाद के उपलब्धता का ज्ञान
2. उत्पाद के तैयार होने के समय का ज्ञान
3. उपभोक्ता की आवश्यकताओं की समझ
4. मूल्य संवर्धन की विभिन्न तकनीकियों की जानकारी
5. उपयुक्त तकनीकी में दक्षता प्राप्त करना
6. संसाधनों का ज्ञान
7. आर्थिक मदद व संभावित बाजार का अनुमान
8. आत्मविश्वास, कल्पनाशीलता, धैर्य, अनुभव व अच्छी वाक्चातुरियता

परिरक्षण के लिए सही फल व सब्जियां

1. डब्बाबंदी के लिए सही फल व सब्जियां – आम, अमरूद, नाशपाती, लीची, केला, अंजीर, मटर, आलू, टमाटर, करेला, बैगन, अदरक व गाजर वगैरह।
2. चटनी केचप व सौस के लिए फल व सब्जियां –टमाटर, आम, पपीता, सेब, आंवला, वगैरह।
3. अचार के लिए फल व सब्जियां – टमाटर मटर, गाजर, अदरक, नीबू वगैरह।
4. जैम के लिए फल – सेब, आम, अनन्नासव पपीता वगैरह।
5. जैली के लिए सही फल– अमरूदव आलूबुखारा वगैरह।
6. मार्मलेडके लिए मुनाबिस फल व सब्जियां – नीबू व संतरा वगैरह।
7. मुरब्बों के लिए सही फल व सब्जियां – आंवला, आम, बेल, गाजर, पपीता, बेर, नाशपाती व केला वगैरह।
8. कैंडी के लिए सही फल व सब्जियां – पेठा, आंवला, पपीता वगैरह।

शुष्क क्षेत्र के फल सब्जियों में मूल्य संवर्धित उत्पाद विकास

फल	प्रसंस्कृत उत्पाद
केर	अचार ,चूर्ण
हिंगोटा	चूर्ण ,मीठी हिंगोटा, नमकीन , ब्रेड स्प्रेड,
बेर	अचार ,चूर्ण, जूस , स्कवैश , कैंडी , जैम
सांगरी	आचार , बिस्किट, लड्डू, सब्जी
मतीरा	जूस , स्कवैश , कैंडी ,
काचरी	अचार ,चूर्ण, सब्जी
ग्वार	अचार ,चूर्ण, सब्जी , आइसक्रीम स्टबिलाइज़र, ग्वार गम
फॉग	चूर्ण, रायता
आंवला	जूस, शर्बत, लड्डू , कैंडी , मुखवास , चूरन, मुरब्बा, आचार, तेल

टमाटर तथा मौसमी सब्जियों के मूल्य संवर्धित उत्पाद निर्माण कैसे करें सामग्री एवं विधि :

टमाटर की चटनी

1. टमाटर एक किलो
2. प्याज 100 ग्राम
3. अदरक 50 ग्राम
4. लहसुन 20 ग्राम
5. चीनी 750 ग्राम
6. लाल मिर्च 15 ग्राम
7. गरम मसाला 10 ग्राम

विधि : एक किलो कटे हुए टमाटरों में पिसे हुए प्याज 100 ग्राम, अदरक 50 ग्राम, लहसुन 20 ग्राम मिलाकर पकायें। गरम होने पर 750 ग्राम चीनी मिलायें व पकाते रहें।चाश्नी गाढ़ी होने पर पिसी लाल मिर्च 15 ग्राम व गरम मसाला 10 ग्राम मिलायें। गाढ़ी होने पर नमक मिलाकर नीचे उतारें व सोडियम बेंजोएट एक ग्राम प्रति किलो टमाटर की दर से अलग से घोल बनाकर मिलायें व बोतलों में भर दें।

सब्जियों का मिश्रित अचार

1. गोभी -500 ग्राम कटे हुये **(**2 1/2 कप**)**
2. गाजर -500 ग्राम कटे हुये **(**2 1/2 कप**)**
3. हरे मटर के दाने या शलजम -200 ग्राम **(**1 कप**)**
4. हींग**–** एक चने के दाने के बराबर
5. सरसों का तेल -100 ग्राम (आधा कप)
6. पीली सरसों -2 टेबल स्पून **(**पीसी हुई**)**

7. हल्दी पाउडर -1 छोटी चम्मच
8. लाल मिर्च पाउडर -1 छोटी चम्मच
9. सिरका**– 1** टेबल स्पून
10. नीबू का रस **2** (2 1/2 छोटी चम्मच**)**
11. नमक स्वादानुसार

विधि : गोभी को बड़े बड़े टुकड़ों में काट लीजिये(पानी गरम कीजिये और 1 छोटी चम्मच नमक मिलाइये) इस पानी में गोभी के टुकड़े डाल कर, ढककर, 10 - 15 मिनिट के लिये रख दीजिये, अब गोभी को इस पानी से निकालिये और साफ पानी से धोइये. गाजर धोइये, छीलिये और फिर से धोइये अब इन गाजर के 2 इंच लम्बे पतले टुकड़े काट लीजिये. मटर छीलिये, दाने धो लीजिये. किसी बर्तन में इतना पानी गरम करने रख दीजिये कि सब्जियां पूरी तरह डूब सकें, पानी में उबाल आने पर, सारी कटी हुई सब्जियां उबलते पानी में डालिये, 3 -4 मिनिट उबालिये और ढककर 5 मिनिट के लिये रख दीजिये. सब्जियों का पानी किसी चलनी में छान कर निकालिये और सब्जी को किसी धुले मोटे कपड़े के ऊपर, डाल कर धूप में 4-5 घंटे सुखाइये. जब सब्जियों में पानी बिलकुल न रहें तब इन्हैं एक बड़े बर्तन में डालिये, तेल को कढ़ाई में डालकर गरम कीजिये, तेल गरम होने के बाद गैस प्लेम बन्द कर दीजिये, तेल को हल्का गरम रहने पर, पीली सरसों, हल्दी पाउडर, नमक, लाल मिर्च, हींग पीस कर डालिये और सब्जियों में डालकर अच्छी तरह मिला दीजिये, सिरका या नीबू का रस भी मिला दीजिये. अचार को सूखे हुये कांच या प्लास्टिक कन्टेनर में भर कर रख दीजिये, 2 दिन में 1 बार चमचे से अचार को ऊपर नीचे कर दीजिये. 3-4 दिन में यह अचार खट्टा और स्वादिष्ट हो जाता है. गोभी, गाजर, मटर का अचार (mix vegetable pickle) तैयार है, यह अचार 1 महिने तक बिलकुल अच्छा रहता है, अधिक दिन चलाने के लिये, अचार को फ्रिज में रखा जा सकता है या अचार में इतना तेल डाल दीजिये कि अचार तेल में डूबा रहे.

उद्यमिता विकास हेतु उपयोगी सौर उपकरण

सुरेन्द्र पुनियाँ
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

प्रस्तावना

सूर्य अक्षय ऊर्जा का सबसे बड़ा स्त्रोत है। जोधपुर में सौर ऊर्जा का औसत माप करीब 6 किलो वाट घण्टा प्रति वर्ग मीटर प्रतिदिन है। यह ऊर्जा का प्रदूषण रहित स्त्रोत है। सौर ऊर्जा के समुचित उपयोग से पारंपरिक स्त्रोतों पर निर्भरता काफी हद तक कम की जा सकती है। थार मरूस्थल देष का एक ऐसा क्षेत्र है जहां सबसे ज्यादा सौर ऊर्जा उपलब्ध रहती है और सबसे ज्यादा समय तक सूर्य प्रकाश उपलब्ध रहता है। शुष्क क्षेत्र में सौर ऊर्जा की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता को देखते हुए इसका अधिक से अधिक दोहन हो सकता है। इस कभी खत्म न होने वाली सौर ऊर्जा का उपयोग करने के लिए काजरी ने पिछले तीन दशक में विभिन्न प्रकार के घरेलू, खेती और उद्योग में काम आने वाले सौर यन्त्रों के विकास हेतु शोध कार्य किया जा रहा हैं। सौर ऊर्जा को खाना पकाने, कृषि उत्पादों को सुखाने, पानी गर्म करने, पशु आहार उबालने, आसुत जल उत्पादन, मोम पिघालने, शीत भण्डारण आदि के उपयोग में लिया जा सकता है। इसके अलावा पौधों में दवाई छिड़कने के लिए सोलर स्प्रेयर और सोलर डस्टर भी बनाए गए। वर्तमान में काजरी में कृषि–वोल्टेइक प्रणाली या सौर खेती की परियोजना पर कार्य चल रहा है। जिसके द्वारा एक ही भूमि इकाई से फसल और बिजली, दोनों का उत्पादन किया जा सकता है। मरुक्षेत्र की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए प्रकृति प्रदत्त इस निशुल्क सौर ऊर्जा का उपयोग कर संस्थान ने घरेलू, व्यावसायिक व कृषि सम्बन्धी सौर उपकरणों का विकास किया गया।

1. पशु आहार सौर चूल्हा

पशु आहार सौर चूल्हा समतल सौर संग्राहक एवं हरित–गृह प्रभाव के सिद्धान्त पर आधारित है। सूर्य की लघु तरंगो/किरणों वाली (400–700 नैनो मीटर) वाली किरणें काँच के तल पर पड़ने के बाद संग्राहक में प्रवेष करती हैं जो दीर्घ तरंग तापीय किरणों में परिवर्तित हो जाती है एवं काँच के तल से बाहर नहीं जा पाती है। जिससे तापमान काफी हद तक बढ़ जाता है।

निर्माण एवं उपयोग

गांवो में पशु आहार (बांटा) पकाने के लिये बड़े पैमाने पर लकड़ी व गोबर को जलाया जाता है। बाजार में उपलब्ध सौर चूल्हा दिन में दो बार खाना बनाने में सक्षम है। इसलिए इसकी कीमत भी बहुत अधिक है। चूँकि पशुओं के लिए एक बार ही आहार (बांटा) को उबालना पड़ता है इसलिए यह सस्ता पड़ता है। पशुओं के खाद्य पदार्थ (बांटा) पकाने हेतु एक बड़े आकार का सौर कुकर रेखांकित, विकसित और अन्विक्षित किया गया। कुकर में स्थानीय रूप से उपलब्ध एवं सस्ती सामग्री चिकनी मिट्टी, गोबर, बाजरा या गेंहूँ का भूसा प्रयोग में आती है। व्यवसायिक सामग्री जो इसके निमार्ण हेतु आवश्यक है वह है सादा कांच, लकड़ी, माइल्ड स्टील एंगल और सीट, एल्यूमिनियम सीटव पकाने के बर्तन आदि। इसके लिए जमीन पर गड्ढा खोदते है। चिकनी मिट्टी, बाजरे की भूसी एवं गोबर का पेस्ट तैयार कर लेते है। इसे दो दिनों तक सूखने देते है। इसका 53 मिमी मोटा लेप गड्ढे की तली में बिछा देते है। चारों तरफ तथा तले में 150 मिमी लेप लगाते है। उसके ऊपर 24 गेज की जी आइ शीट, पेंदे में रखकर काले रंग का पेन्ट कर देते है। कोणीय लोहा एवं लकड़ी फ्रेम में दो काँच (4 मिमी. मोटा) फिट कर देते है। चार एल्यूमिनियम के बर्तनों को काले किए गए ढक्कन से ढक देते है। पशु आहार को पानी में मिलाकर बर्तन में रख देते है। पशु आहार चूल्हे के विभिन्न अवयवों के माप निम्नवत दिये गये है।

- गड्ढे का मापः 1980 मिमी × 760 मिमी × 100 मिमी
- अवशोषक प्लेटः 6′ × 2′
- दोहरे काँचः 6′3′′ × 2′3′′
- परावर्तकः 6′3′′× 2′3′′

इसके द्वारा 5 पशुओं हेतु बाँटा (खाने की सामग्री) 10 किलो10 किग्रा तक दिन के 3 बजे तैयार हो जाता है तथा इसकी प्रभावकारिता 21.8 प्रतिषत है। यही समय पशु आहार (बांटा) का होता है एवं प्रतिवर्ष लगभग 1000 कि.ग्रा. ईंधन की लकड़ी की बचत करता है। इसकी कीमत परार्वतक के साथ लगभग 12,500 है।

पशु आहार सौर चूल्हा

2. उन्नत सौर शुष्कक

थार रेगिस्तान फल व सब्जियाँ सुखाने के लिये बहुत ही उपयुक्त क्षेत्र है। सूर्य के प्रकाष से खुले मैदान में फलों व सब्जियों को सुखाने की विधि दीर्घकाल से प्रचलित है। इस विधि से फल व सब्जियों को सुखाने पर उपज में धूल गिरती है, कीड़े लग जाते हैं तथा उत्पाद को वर्षा से नष्ट होने का डर रहता है। सूखी हुई पत्तेदार सब्जियाँ तेज हवा में उड़ जाती है। इस समस्या का हल करने के लिए काजरी में सौर शुष्कक का विकास किया गया है। इस संबंध में धनिया, हरी मिर्च, पालक, भिण्डी, टमाटर, मेथी, प्याज, गाजर, फूल, गोभी, पत्ता गोभी, बथुआ, लौकी, शक्कर कन्द, इमली इत्यादि सुखाने के सफल प्रयोग किये गये है। इसमें 80 किग्रा सब्जी चार दिनों में सूख जाती है। इसमें सूखे हुए पदार्थो में कुछ ''इन्सटेन्ट प्रोडक्ट'' भी बनाये गये है जैसे धनिया की चटनी, टमाटर चटनी इत्यादि। जबकि इसकी उम्र करीब 12 साल है। काजरी में एक घरेलू सौर शुष्कक भी बनाया गया है जिसमें सभी प्रकार की सब्जियों को सुखाया जा सकता हैं सूखी हुई फल व सब्जियों के व्यवसायीकरण को राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय व्यापारिक पद्धति से जोड़कर आमदनी प्राप्त की जा सकती है। इन सूखी सब्जियों को गृहणियाँ घरों में रख सकती हैं व जरूरत पड़ने पर विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ बना सकती हैं तथा विभिन्न प्रकार की इन्सटेन्ट चटनियां व इन्सटेन्ट सूप भी तैयार कर सकती हैं जिससे श्रम व समय की बचत हो सकती है। अतः यह सौर शुष्कक गृहणियों के लिए वरदान है।

निर्माण एवं उपयोग

शुष्क क्षेत्रों में अधिकतम सौर विकिरण एवं न्यूनतम आपेक्षिक आर्द्रता के कारण प्राकृतिक संवहन प्रकार का सौर शुष्कक काफी उपयोगी पाया गया है। विद्युत चालित शुष्कक काफी महंगा एवं बिजली की उपलब्धता पर निर्भर होने के कारण कम उपयोग में आता है। इसलिए इनक्लाल्ड सौर शुष्कक का विकास किया ताकि पूरे वर्षभर अधिकतम सौर विकिरण प्राप्त की जा सके। बाजरे के तने संग्राहक की पेंदी में बिछा देते है ताकि उष्मा का कम से कम ह्रास हो।

''काजरी'' द्वारा एक ऐसे सौर शुष्कक का निर्माण किया गया है जिसमें दस इकाइया एक क्रम में लगाकर 40 किग्रा पत्तो वाली (पालक, धनियाँ, मेथी, पुदीना एवं बथुआ) एवं 80 किग्रा अन्य सब्जियाँ (भिण्डी, गोभी, ग्वारफली, प्याज, लहसुन, हरी व लाल मिर्च, मटर, चुकन्दर, टमाटर, अरबी, हल्दी, मूली, गाजर, इमली, काचरा, इत्यादि) तथा बेर, खजूर, अंगूर, इत्यादि फल सुखा सकते है। इनकों सौर शुष्कक द्वारा 2 से 4

दिनों में सुखाया जा सकता है।हरी सब्ज्यों का रंग हरा ही रहता है। सूखी सब्जियों को गर्म पानी में भिगाने से उनका आकार वापस ताजी सब्जी के बराबर हो जाता है तथा बाद में सब्जी बना सकते है। टमाटर, मिर्च एवं धनिया का पाउडर बना लेते है। जो इन्स्टेन्ट चटनी बनाने के काम आता है। शुष्कक के निर्माण में एल्युमिनियम सा सफेद लोहे की चद्दर, लोहे की एंगल, जंग रहित स्टील की जाली, बाजरा के तने एवं काँच, इत्यादि काम में लेते है। इस शुष्कक के विभिन्न अवयवों के माप निम्नवत है।

- **काँच का क्षेत्रफलः** 1.08 मी.^{2}
- **क्षमता:** पत्तीदार सब्जीः 4 कि.ग्रा.**,** अन्य सब्जीः 8 कि.ग्रा.
- **सुखाने का समयः** पत्तीदार सब्जीः 2 दिन**,** अन्य सब्जीः 4 दिन
- **पे बैक समयः** 2 वर्ष
- **कीमतः** रुपये 13,500/–

कार्य निष्पादन एवं मूल्यांकन

सौर शुष्कक के कार्य निष्पादन का मूल्यांकन किया गया। बिना सब्जी लोड किये अधिकतम तापमान लगभग 82° सेल्सियस पाया। सब्जी लोड करने पर अधिकतम तापमान 60–65° सेल्सियस के मध्य रहा। यह तापमान ड्राइंग के लिए बहुत ही उपयुक्त है। ट्रे के ऊपर एक काले रंग की पेन्ट की गई जी आई शीट रखकर हम सूखे उत्पाद का रंग एवं गन्ध बरकरार रख सकते है। किसानों के पास जब सब्जियों की मात्रा व उत्पादन अधिक हो तो उस समय सुखाकर बाद में अधिक कीमत पर बेच भी सकते है। सूखी हुई फल व सब्जियों के व्यवसायीकरण को राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय व्यापारिक पद्धति से जोड़कर आमदनी प्राप्त की जा सकती है। इन सूखी सब्जियों को गृहणियाँ घरों में रख सकती हैं व जरूरत पड़ने पर विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ बना सकती हैं तथा विभिन्न प्रकार की इन्सटेन्ट चटनियां व इन्सटेन्ट सूप भी तैयार कर सकती हैं जिससे श्रम व समय की बचत हो सकती है। अतः यह सौर शुष्कक गृहणियों के लिए वरदान है। एक सौर शुष्कक, जिसकी क्षमता 10 कि.ग्रा. है, की कीमत करीब रुपये 13500 है। इस तरह पूरी इकाई, जिसमें 10 सौर शुष्कक लगे होते हैं, की कीमत रुपये 113500 है।

डिरेक्ट एवं इनडिरेक्ट उन्नत सौर शुष्कक

उन्नत सौर शुष्कक

3. सौर ऊर्जा चलित छिडकाव तथा बुरकाव यन्त्र (सौर पीवी डस्टर/स्प्रेयर)

शुष्क खेती में पौधो को नाशीकीटों से बचाने के लिये कीटनाशक दवाओं के छिडकाव हेतु एक सौर छिडकाव यन्त्र व एक सौर बुरकाव यन्त्र बनाया गया है। इन दोनों उपकरणों मे सौर बैटरी के पैनल को सिर के उपर क्षैतिज अवस्था में रखने का प्रावधान है, जिससे काम करने वाले के सिर पर छाया भी हो जाती है और सौर उर्जा बिजली में परिवर्तित हो जाती है। सोलर स्प्रेयर में उत्पन्न बिजली से एक विद्युत मोटर तेजी से चलाई जाती है, जो द्रव की बून्दों को फुहारों मे बदल देती है। ये बून्दें पेडो की पत्तियों के नीचे व उपर पहुंच जाती है। इस संयन्त्र में उत्पन्न बिजली को बैटरी में भी संचित कर सकते हैं, जिससे इसको सुबह, देर षाम व बादल छाये रहने पर भी काम मे ले सकते है। खेतों में कीटनाशक पाउडर छिडकने के लिये बनाये गये अनूठे सोलर डस्टर मे सोलर सेल से उत्पन्न बिजली एक विशेष प्रकार के पंखे को तीव्र गति से चलाती है, जिससे पाउडर हवा के साथ स्वतः तेजी से बाहर निकल फसल पर फैलता रहता है। यह एक द्विउद्देशीय पर्यावरण हितैषी सुविधाजनक उपकरण है एवं इस सौर पीवी डस्टर के विभिन्न अवयवों के माप निम्नवत है:

विशेषताएँ:

- पीडकनाशी/कीटनाशी छिड़काव/भुरकाव हेतु सुविधाजनक उपकरण
- क्षमता 0.7 हैक्टेयर/घंटा
- वज़न 6.5 कि.ग्रा.

घटक:

- फोटोवॉल्टिक (7.5 डब्ल्यू.पी. पी वी) पैनल वाहक
- अनुरक्षण मुक्त भंडारण बैटरी
- संगत डस्टर
- यू एल वी छिड़काव यंत्र
- प्रदीपन किट

लाभ:

- कीटनाशी पाउडर के हाथ से छिड़काव/भुरकाव के दौरान होने वाले हानिकारक प्रभाव से बचाव
- पारिस्थिकी अनुकूल यंत्र
- फसल का कीटशत्रुओं एवं बीमारियों से बचाव
- रात में घरेलू प्रदीपन

आर्थिकी: उत्पादन लागत **(**रुपये**)** प्रति इकाई: 5000

सौर पीवी डस्टर

राजस्थान के थार मरूस्थल में पशु आहार उबालने, कृषि उत्पादों को सुखाने एवं पौधों में दवाई छिड़कने के लिए बिजली से चलने वाले उपकरण काम में लिए जाते है लेकिन हमारे कई गांवो मे बिजली नही है और अगर कही उपलब्ध है तो वह काफी महंगी पडती है जो कि एक साधारण किसान की आर्थिक क्षमता के बाहर है लेकिन हमारा यह सौभाग्य है कि यहां शुष्क क्षेत्र में सौर ऊर्जा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, जिसका उपयोग पशु आहार उबालने एवं फल व सब्जियों को सुखाने के लिए किया जा सकता है। इन उपरोक्त समस्याओं को हल करने के लिए केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (काजरी) ने सौर ऊर्जा का उपयोग कर कम कीमत के पशु आहार सौर चूल्हा, उन्नत सौर शुष्कक एवं सौर पीवी डस्टर बनाए गए हैं। काजरी का यही उद्देष्य है की काजरी में निर्मित सौर यन्त्रों का लाभ सीधे खेतों मे पहुंचा कर किसानों की आमदनी बढाई जा सके।